लोकभाव स्वरांजली

(भाग–दो)



चन्द्ररेखा ढडवाल जनमेजय सिंह गुलेरिया

इंडियन नेशनल ट्रस्ट फार आर्ट एण्ड कलचरल हैरिटेज

लोकभाव स्वरांजली (भाग–दो)

(कांगड़ा के बहत्तर प्रणय, घटना जन्य, वर्णन प्रधान, झिंझोटी तथा पाक्षिक गीतों का भाव विश्लेषण व स्वरांकन)

उन अनाम कवि व गीतकारों को समर्पित, जिन्होंने कांगड़ा की मिट्टी की सुगन्ध को संजोया और भविष्य की प्रेम व रंग-गंध रची हरियाली के लिए वैचारिक मनोभूमियों की परिकल्पना शब्द-शब्द उकेर दी।

जनमेजय सिंह गुलेरिया
गीत चयन व स्वरांकन

चन्द्ररेखा ढडवाल
कथ्य विश्लेषण व भावानुवाद

आवरण पृष्ठ का चित्रांकन – नंदलाल ठाकुर व मुकेश थापा

इंडियन नेशनल ट्रस्ट फार आर्ट एण्ड कलचरल हैरिटेज

ISBN : 978-81-931425-2-3

प्रकाशक : **देस संगीत प्रकाशन**, गाँ. व डा. रक्कड़, धर्मशाला
शब्द संयोजन : सुश्री नीलम व नीला (साई कम्प्यूटरज़, धर्मशाला)
प्रथम संस्करण : 2017
मूल्य : 250 रु
अधिकृत वितरक : * ढडवाल स्टेशनर्ज एण्ड स्पोर्टस, कचैहरी अड्डा, धर्मशाला, दूरभाष : 01892-224867, 94180-87897
** पाठक पब्लिकेशनज़ 35, जीरो रोड, महाजनी टोला इलाहाबाद - 211003 दूरभाष : 098395 53886

मुद्रक : अर्पित प्रिंटर्ज गगल, कांगड़ा # 94180 44708

आभार

हम हार्दिक आभारी हैं, संस्कृति, सामाजिक ज्वलंत विषयों तथा भारतीय दर्शन के अध्येयता व व्याख्याता, पूर्व निर्वाचन आयुक्त रहे श्री के.सी. शर्मा, उत्तरी क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र पटियाला के निर्देशक संगीताचार्य प्रो. (डॉ.) सौभाग्य वर्धन बृहस्पति, राष्ट्रीय स्तर के ख्याति प्राप्त बाँसुरी वादक व संगीतज्ञ डॉ. राजेन्द्र गुरुंग तथा काँगड़ा लोक मानस के सरोकारों व समसामयिक विषयों के विश्लेषक, दिव्य हिमाचल मीडिया समूह के मुख्य संपादक श्री अनिल सोनी के, जिन्होंने हमारी पुस्तक पर अपने विचार देकर हमें अनुग्रहित किया। प्रसिद्ध चित्रकार डॉ. नंदलाल ठाकुर सह–आचार्य, दृष्य कला विभाग हि.प्र.वि.वि. शिमला, सफल चित्रकार सुरेश चौधरी तथा राष्ट्रीय फ़लक पर अपनी पहचान बना रहे चर्चित युवा चित्रकार, श्री मुकेश थापा ने आवरण पृष्ठ का चित्रांकन करके हमें बहुमूल्य सहयोग दिया है। राहुल से मिले स्नेह सहयोग का भी हमारे लिए बहुत मूल्य है। विशेष धन्यवाद इंडियन नेशनल ट्रस्ट फ़ार आर्ट एण्ड कल्चरल हैरिटेज, कांगड़ा के संयोजक श्री एल.एन. अग्रवाल तथा अन्य पदाधिकारियों का, जिनके सहयोग से लोकभाव स्वरांजली के बाद इसी का भाग दो प्रकाशित हो सका। संगीत के क्षेत्र में सार्थक कार्य कर रहे सफल गायक व संगीत प्राध्यापक डॉ. सतीश ठाकुर तथा सुप्रसिद्ध व चर्चित लोकगायक श्री करनैल राणा के प्रत्यक्ष व परोक्ष सहयोग के लिए भी हम धन्यवादी हैं। लोक गायन से जुड़े श्री सुनील राणा, वर्षा कटोच, मान सिंह, विक्रान्त भन्दराल, रिधि अत्री तथा रीता के योगदान को भी हम रेखांकित करना चाहेंगे।

सहृदयी महिला गायिकाओं तथा गायकों के हम ऋणी हैं। जिनसे हमें लोकगीतों की अमूल्य निधि अपने मूल स्वरूप में प्राप्त हुई :– स्वर्गीय श्रद्धेय श्रीमती रशिमा देवी, सर्वसम्मानीय श्रीमती लक्ष्मी चम्बियाल, सरला गुलेरिया, निर्मला गुलेरिया, इच्छेया मनकोटिया, वीना बड़ोत्तरा, विमला राणा, तृप्ता सिंह, रेखा सिंह, सोनी चम्बियाल, कृष्णा पठानिया, चंचला पठाणिया, निर्मला ढडवाल, आशा ढडवाल, सरिता ढडवाल, श्यामा ढडवाल, शशी ढडवाल, मथुरा देवी, आशा अग्रवाल, कांति सूद, इन्दु, लता सलारिया, सविता, वाश्ला, निशा, शिवानी, रीता, रीना, एकता, पूनम, राखी, मधु, बबली, शीतल, वन्दना तथा लोकगायन से सम्बद्ध प्रताप चन्द, होशियार सिंह, कुलदीप राणा, शशी गौतम, ब्रजेश, अरूण, संजय, रजत, आंचल, मनीष व शुभम के प्रति आभार।

प्रशस्य प्रयास का दूसरा पुष्प

पारम्परिक सामाजिक जीवन में लोक–संस्कृति पूर्ण रूपेण अनुस्यूत है। इस संस्कृति के अनेक पक्षों में लोक–गीतों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। ये हमारे जीवन को प्राणवत् स्पन्दित करते हैं। कांगड़ा जनपद की लोक गीत परम्परा अतीव समृद्ध रही है। यह परम्परा विस्मृत या विकृत न हो, इस दृष्टि से इन गीतों को यथा–सम्भव अपने मूल–रूप में अक्षुण्ण बनाये रखने की आवश्यकता अनुभव की जाती रही है। कांगड़ा के अनेक प्रतिनिधि लोक–गीतों को संकलित करने, पहाड़ी भाषा तथा संस्कृति से अपेक्षाकृत अनभिज्ञ श्रोताओं, पाठकों की सुविधा हेतु उनके कथ्य का विश्लेषण–पूर्वक भावानुवाद प्रस्तुत करने तथा संगीत की दृष्टि से उनका स्वरांकन करने का भगीरथ प्रयास किया है लब्ध–प्रतिष्ठित कवयित्री चन्द्ररेखा ढडवाल तथा अपने विषय में निष्णात संगीतज्ञ जनमेजय गुलेरिया ने। इस प्रशस्य प्रयास का प्रथम पुष्प पहले आ चुका है; दूसरा पुष्प "लोकभाव स्वरांजली (भाग–दो)" के रूप में हमारे समक्ष है।

इस संकलन में समाविष्ट लोक–गीतों के ज्ञाताज्ञात रचयिताओं ने जीवन को उसकी समग्रता में देखा है, अकेले–अकेले व्यक्तियों के अन्तस् में भी झांका है और सामूहिकता को भी महसूसा है। हमारे जीवन की सर्वांगीणता तथा विविधता के साक्षी हैं, इस संकलन के लिए चयनित लोक–गीत। इनमें प्रणय भी है, परिणय भी; संयोग भी; वियोग भी; अनुराग भी; विराग भी और विवाहित जीवन के दुःख–सुख भी हैं। "बरखा री छम–छम" में प्रोषितपतिका के मन की टीस "पाणिए जो जाणा मेरेयां पैरा कण्डे चुभदे" आदि भावों में व्यक्त होती है। बलोचिस्तान गये युवक की घर पर बैठी पत्नी चिट्ठियां लिखती है कि आम पक गये हैं, परन्तु उसका साजन छुट्टी न मिल पाने के कारण घर नहीं आ सकता। वह पत्नी के कहने पर बहन के विवाह के लिये ढेर–सारी धन–राशि भेजता है और अपनी माता की मृत्यु पर शोक व्यक्त करता है। इनसे प्रोषितपतिका को सांत्वना नहीं मिलती है। वह तो पति के घर लौटने पर ही आनन्द उल्लास में निमग्न होती है। विरहानल द्वारा जनित वेदना का वर्णन "हरिये नी भरिये सब्ज खजूरे" शीर्षक गीत में युवती के मुख से इस प्रकार उद्गीर्ण होता है – "कंत जिन्हां दे सदा मुसाफर, नारां दे क्या हीले ओ"। इस गीत के इस बंद में ("राज बिन कोई राजा झूरे/बैद बिना कोई रोगी ओ/कन्त बिना कोई नार जे झूरै/तिन्हों फिरन बजोगी ओ") अर्थान्तरन्यास अलंकार की झलक मिलती है। "चिट्टी चिट्टी चादर" वाले गीत में ससुराल के निर्मम वातावरण की कल्पना है, परन्तु "कुथूआं ते आया मेरा रूणझुणुआं" गीत में घर के काम में हाथ बटाने वाले युवक तथा दोनों पत्नियों के सहयोग द्वारा निर्मित अनुकूल वातावरण का सुखद चित्रण है। उधर "डोला सब फुल्ल फुल्ले" में सन्तान के अभाव में व्यथित युवती का किसी और पत्नी से प्राप्त अपने पति की सन्तान का समाचार सुनकर भावुक होना कालिदास की इस मार्मिक सीख "कुरू प्रियसखीवृत्ति सपत्नीजने" की याद दिला जाता है। इन गीतों में नवोढ़ा के ससुराल के प्रति सन्देह–भाव, अहर्निश कातने–बुनने, बावड़ी से पानी लाने आदि कार्यों में सतत लगे रहना भी वर्णित है।

उधर "अलबेलुआ हो दगेबाजुआ हो" में श्रृंगार रस के संयोग तथा विप्रलम्भ दोनों पक्षों का युगपद् वर्णन है। इससे एक–दूसरे के प्रभाव में श्रीवृद्धि होती है। कोई–कोई गीत नीतिपरक भी हैं, यथा, सहजैं सहजैं हस्सणा"। ऐसे ही "जुगत जे करिए" में वतनां दी खातर मरना नीं लोड़ी/बतनां दी खातर जी दस्सिए" तथा "देसां दा बैर मटाई दस्सिए" जैसे उदात्त आदर्श अपनाने की शिक्षा है। "बसणा पहाड़ां दा" में "मनारे भोले इत्थू माणू जे बसदे" यह कहकर पर्वतवासियों की निश्छल, निरीह, सहज प्रकृति की ओर संक्षिप्त संकेत है। "पाणी पीणा हो" शीर्षक गीत में कांगड़ा घाटी के नैसर्गिक सौन्दर्य का वर्णन है तथा "छोटी सुरगाणी बड्डा डैम बणेयां" में दायित्व से भागने की बजाय दायित्व के प्रति जागने का सन्देश स्पष्ट है।

लोक–गीतों में कथ्य की अभिव्यक्ति को धार देने के लिये वक्रोक्ति, प्रतीक, लक्षणा, व्यंजना तथा अलंकारों का भी यथा स्थान प्रयोग किया गया है। "कुत्थु भला" में 'तितलियां' राजकुमारियों को तथा 'बणां दे मोर' अपर राज्य के राजकुमारों को प्रतीकित करते है। "सिल्लो बिल्लो सक्कियां भैणां" में छुआरे से 'साधारण युवक' अभिप्रेत हैं, "होरना पतणां इक्को इक बेड़ी" में नदी के संकट से निपटने के उत्कट उत्साह की ओर इंगित है क्योंकि मां–बाप, भाई–बहनों, सहेलियों को छोड़कर ससुराल जो जाना है। "नच्च मेरी घुंगरिये" में 'मेरे जूते, घघरा, चोला पुराने हैं' भाव इतना कहकर वक्रोक्ति द्वारा नवीन जूते, घघरा, चोला लाकर देने की फरमाइश है। "डोला सब फुल्ल फुल्ले" में "फुल्ल" खिलना, पंजाप (गुन्तर संस्कार हेतु लाया गया पांच तीर्थों का जल), कुशा, पुरोहित, नाई–सभी पुत्र–प्राप्ति के मंगल समाचार को प्रतीकित करते हैं। "मेरा मन नी लगदा कत्तणे/चरखे भन्नी देयां द्योरा" में प्रतीकों द्वारा बन्धनों से मुक्ति की अभिलाषा जताई गई है। "कैसा लगा गोरिए पहाड़ां दा बसणा" में तथा "कुक्कू बोलदा" (कुक्कू पक्षी की पुकार) उद्दीपन विभाव का भाव दर्शाता है।

हमारे लोक–गीतों में अनुप्रास, उपमा, रूपक, सन्देह, मानवीकरण आदि अलंकारों का भी प्रयोग हुआ है जो गीतों में चमत्कार, मधुरिमा आदि के कारण बनते हैं। उदाहरणतः "कुंजा जाई पईयां बरोट" में 'कलेसर' तथा 'बेसर' में अन्त्यानुप्रास है, "उआरे भी नाला पारे भी नाला" के 'उआरे' तथा 'पारे' में छेकानुप्रास द्रष्टव्य है। "उड़ी जायां", गीत में मानवीकरण स्पष्ट है। क्योंकि यहां मानव, मानवेतर जगत् से तादात्म्य स्थापित है। 'नच मेरी घुंगरिये' में एक प्रकार से पर्यायोक्ति अलंकार की झलक है।

कांगड़ा क्षेत्र के अवंतस–भूत बहत्तर लोक–गीतों को परिनिष्ठित तथा उपादेय रूप में प्रस्तुत करने का जो प्रयास जनमेजय गुलेरिया तथा चन्द्ररेखा ढडवाल ने किया है, उसके लिए वे अभिनन्दन के पात्र हैं। लोकगीतों का मौलिक स्वरूप, स्वरांकन तथा भाव–विश्लेषण एक साथ, एक पुस्तक में प्रस्तुत करना अत्यन्त सराहनीय हैं।

–के.सी. शर्मा

(आईएएस)

पूर्व निर्वाचन आयुक्त (हि.प्र.)

संस्कृति की आत्मा का संबोधन

(लेखकीय सुर, संगीत की लय)

लोक परंपराओं से आच्छादित शब्द और भाव से सराबोर अर्थ से अगर आने वाली पीढ़ियां रू–ब–रू होना चाहेंगी, तो यह संग्रह लोकभाव के संगम में नहाती हुई किसी चिड़िया की तरह सामने आकर शृंगार करता हुआ प्रतीत होगा। जैसे शोध की गंगा बहने लगी हो और स्वर के भाव में डूब कर किताब का हर पन्ना हमारे आसपास आकर भीग रहा हो। टूटती सामाजिक नाव पर, सांस्कृतिक जल प्लाव को लांघते दो साहित्यिक मांझी, जनमेजय सिंह गुलेरिया और चंद्ररेखा ढडवाल फिर समय के हमारे छोर पर आकर लोकभाव स्वरांजली (भाग–दो) की प्रस्तुति देते हैं, तो कांगड़ा के प्रणय, घटना जन्य, वर्णन प्रधान, झिंझोटी तथा पाक्षिक गीतों के भाव का विश्लेषण और स्वरांकन हम महसूस करते हैं। लगातार दूसरे प्रयास में भी लेखक द्वय ने मिट्टी से उपजी धुनों को वक्त के बहरे हो चुके कानों में कुछ इस तरह परोसा है कि हम खुद को प्रतिबिंबित होते देख सकते हैं। कितने ही घुंघरूओं की आवाज के बीच मैली चादर के आर पार झांकने की कोशिश पुरूष समाज की रही होगी, क्योंकि प्रश्नों से बिंधे गीत आज भी चीखते हैं, तो हजारों सन्नाटों के बीच भाव की बेड़ियां मुक्त होने का प्रयास करती हैं। राजे दिए बेड़िए, या बन्सरिए हो भैणे बड़ी ओ प्यारिये में पराई होती बेटी की भावनाओं की गहराई को छूने का अनूठा संकलन, उस अनाम लेखन को आदरांजलि पेश करता है, जो सदियों से हमारे आंगन की टोह लेता रहा या लोटता रहा।

ये गीत दरअसल सामाजिक पद्धति का ऐसा सांझा मंच एकत्रित करते हैं, जहां हम केवल दर्शक या श्रोता नहीं, रंगकर्मी की तरह बाकायदा जीवंतता महसूस कर सकते हैं। अनेक दृश्यों के बीच स्थापित परंपरा की पालकी उठाने की कसौटी की तरह, चंद्ररेखा ढडवाल व जनमेजय गुलेरिया निश्चित रूप से एक और पड़ाव पार करते हैं। संदर्भों के भीतर तक पाठक को खींचने की अद्‌भुत मिठास और अतीत के गौरव को जिंदा रखने के संकल्प के साथ लेखक द्वय कई युगों के लिए काम कर रहे हैं। हर गीत, अपनी पृष्ठभूमि में सामाजिक संरचना के पट खोलता है, तो अतीत के झरोखे

से निकल कर संगीतमयी परछाइयां हमारी अपनी हो जाती हैं। फिर हम अपनी नानी–दादी की कही हुई बातों में अपने अस्तित्व के चिन्ह ढूंढ लेते हैं। इन गीतों ने कितनी दिवालियां मनाईं, कितने वसंत देखे और न जाने कितने टूटते दिल, अंगड़ाइयां लेती खुशियां और बिखरते रिश्ते महसूस किए होंगे, इसलिए यह पुस्तक लेखकीय सुर और संगीत की लय में समाहित है।

गीतों के अंचल में सैनिक परिवारों के अंधेरों–उजालों के बीच, जलती हुई बाती की तरह औरत का विवरण अगर 'जे तू चलेया नेफा नौकरी' में मिलता है, तो प्रेम के अंगारों में तप कर भी सहजता को समाधि का भाव और कहां मिलेगा। प्रीत की पींगे टूट कर भी कैसे अटूट रहती हैं, इस भाव की परिणति को 'गल्लां होई बीतियां' की समग्रता में देखें, तो गायिकी के चिराग आज भी जल उठते हैं। यह पुस्तक नहीं, संस्कृति की आत्मा का संबोधन है, जहां दृश्य पटल पर ऋतुएं नाचती हैं, लोक जीवन रंग बरसाता है, मेले–त्योहार मुस्कराते हैं, तो रिश्ते–नाते किसी डोर से बंधे खींचे चले आते हैं और तब पाठक मन अपने भीतर के उल्लास, उमंगों, प्रेम, विरह, करूणा, सुख–दुख और सामाजिक सीमा का बोध करके अपने पिंजरों से बाहर निकलने की कोशिश करता है। सामाजिक परिदृश्य में इससे बेहतर भूमिका न चन्द्ररेखा ढडवाल निभा सकती थीं और न ही जनमेजय सिंह गुलेरिया गीतों के समुद्र को हमारे इतना करीब ला सकते थे।

–अनिल सोनी

मुख्य सम्पादक, दिव्य हिमाचल

मीडिया समूह

लोक संस्कृति की प्रासंगिकता को रेखांकित करता सार्थक योगदान

प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल तथा श्री जनमेजय सिंह गुलेरिया की सांझी लोक–लेखन श्रृंखला के अन्तर्गत, लोकभाव स्वरांजली (भाग–दो) पुस्तक में विविध भावों के गीत संकलित हैं। इनका भाव–विश्लेषण तथा स्वरांकन इस संग्रह में है। कांगड़ा क्षेत्र के वियोग, पाक्षिक, झिंझोटी व प्रणय गीतों की सप्तवर्णी छटा इसमें है। जो शब्द, अर्थवत्ता तथा सुर तीनों ही दृष्टियों से अद्‌भुत कार्य है। लोक गीतों के संकलन साधारणतया उपलब्ध हो जाते हैं। पर साथ में अर्थ व भाव गांभीर्य तथा स्वरांकन भी हो, ऐसा सामान्यतः नहीं होता। प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल ने कविता व कहानी के अतिरिक्त निबन्ध लेखन और विशेषतया लोक–संस्कृति विश्लेषण के क्षेत्र में भी सराहनीय कार्य किया है। वह कांगड़ा की भाव भूमि से गहराई तक जुड़ी हुई है सो उन्होंने गीतों का सामान्य अर्थ ही नहीं उनके भीतर छुपे मूल्यों को भी उद्‌घाटित किया है। उनकी प्रासंगिक व्याख्या करते हुए। गीत का भावार्थ यदि हो तो गायक गीत की भीतरी लय को पकड़ पाता है ...।

जनमेजय सिंह गुलेरिया को शैक्षणिक ही नहीं संगीतात्मक व साहित्यिक परिवेश भी अपने पिता से सहज ही प्राप्त हुआ। उनकी व्यक्तिगत योग्यता, प्रतिभा व निष्ठा से जिसमें निरन्तर वृद्धि हुई। मेधावी व समर्पित गुलेरिया ने अपने शिष्यों के प्रति अपने दायित्व को निभाते हुए उन्हें ऊंचाइयों तक पहुंचाया। संगीत विषय में निरन्तर अध्ययनरत जनमेजय ने इन गीतों के संगीतात्मक पहलुओं की सटीक व्याख्या की है ...। इन गीतों में ज्यादातर राग पीलू, बिहाग, भूपाली, यमन, पहाड़ी, झिंझोटी, देस, मालकौंस व भैरवी आदि रागों का प्रभाव परिलक्षित होता है। इन रागों का स्पर्श लोक गीतों के रस व माधुर्य में वृद्धि करता है। उन्हें व प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल को मेरी शुभकामनाएं। ईश्वर संगीतकार व साहित्यकार की सृजनात्मक प्रतिभा तथा सामर्थ्य में सदैव वृद्धि करे। ताकि लोक संस्कृति का क्षेत्र इनके योगदान से लाभान्वित हो सके।

–प्रो. (डॉ.) सौभाग्य वर्धन बृहस्पति

निदेशक, उत्तरी क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, पटियाला।

लोक संस्कृति का प्रकाश–स्तम्भ

लोकभाव स्वरांजली (भाग–दो) में काँगड़ा के प्रणय (संयोग–वियोग) पाक्षिक व घटनात्मक बहत्तर गीतों का भावानुवाद व समीक्षात्मक विश्लेषण प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल ने तथा गीत चयन व स्वरांकन श्री जनमेजय सिंह गुलेरिया ने किया है। प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल के आन्तरिक व्यक्तित्व में एक कवियत्री एवं कथाकार तो है ही, उनमें लोकसंस्कृति को शोधात्मक दृष्टि से विश्लेषण करने का भी आपार सामर्थ्य है। श्रीमती चन्द्ररेखा गीतों के वास्तविक स्वरूप तक पहुँचने में इसलिये भी सक्षम रहीं है क्योंकि वे ग्रामीण परिवेश से सम्बद्ध रही हैं एवं लोकगीत उन्हें घुट्टी के रूप में मिली हुई सम्पदा है। लोकगीत मुख्यतः स्त्री प्रधान होने के कारण ज्यादातर गीतों में स्त्री की पीड़ा को अभिव्यक्ति मिली है। नारी–मनोभावों को अत्यन्त सहजता व बारीकी से शब्दबद्ध करते हुये इनमें निहित मूल्यों तथा विद्रोह के स्वरों को प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल ने हार्दिकता से मुखर किया है।

समर्पित संगीतज्ञ, राज्य तथा राष्ट्रीय शिक्षक सम्मान से विभूषित जनमेजय सिंह गुलेरिया की कला प्रतिभा एवं कर्तव्य निष्ठा को मैंने तब महसूस किया जब मेरे निर्देशन में उन्होंने संगीत चूड़ामणि (विद्यावारिधि) की उपाधि के लिए शोधकार्य किया था। इस संकलन में उन्होंने गीतों के संगीतात्मक पक्ष का राग, लक्षण, सिद्धान्त के आधार पर सूक्ष्म मूल्यांकन एवं विश्लेषण किया है। धीर–गंभीर व अति शालीन व्यक्तित्व के धनी जनमेजय गुलेरिया की अपने कार्य के प्रति अद्‌भुत निष्ठा है।

निसन्देह उक्त पुस्तक भावी शोधार्थियों के लिए महत्त्वपूर्ण साबित होगी। जिला कांगड़ा की सांस्कृतिक धरोहर को भविष्य में भी प्रासंगिक रखने के इस प्रयास के लिए मैं साहित्य व संगीत को समर्पित इन दोनों कला साधकों का ह्रदय से आभार व्यक्त करता हूँ तथा इन्हें साधूवाद देता हूँ। मेरा ऐसा विश्वास है कि यह संकलन कांगड़ा की लोक संस्कृति के आलोक को फैलाने में एक प्रकाश–स्तम्भ बनकर प्रज्जवलित रहेगा।

–प्रो. (डॉ.) राजेन्द्र सिंह गुरूंग
सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष संगीत संकाय
राजकीय महाविद्यालय, धर्मशाला

लोक संस्कृति को समर्पित सार्थक प्रयास

प्राकृतिक व सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण के लिए संकल्पबद्ध संस्था, राष्ट्रीय कला व संस्कृति धरोहर न्यास; की स्थापना सन 1984 में हुई। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी की अध्यक्षता में निर्मित इस संस्थान का लक्ष्य देश की परम्परा व संस्कृति के संरक्षण–संवर्धन के प्रति कर्तव्य को समझना तथा दूसरों को समझाते हुए कार्यरत होना है। सामान्य जन को भारत की विविध रंगी संस्कृति से जोड़ना हैं। आज के समय में बाज़ारवाद के निरन्तर बढ़ते वर्चस्व तथा लोगों के व्यवसायिक होते जा रहे दृष्टिकोण के कारण हमारे मूल संस्कारों तथा परिवेश के प्रति उदासीन सा रवैया होता जा रहा है। इसी बाज़ार के प्रभाव से सामान्य जन को बचाने के लिए उसे अपने मूल से जोड़ना ज़रूरी है। अपने मूल अर्थात ऐतिहासिक व सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण में कांगड़ा चैप्टर, पिछले बारह वर्षों से प्रयासरत्त है। ... इस दृष्टि से लोकभाव स्वरांजली, जिसमें चौरासी जन्म गीतों का स्वरांकन तथा समीक्षात्मक भावार्थ किया गया था, बहुत महत्वपूर्ण प्रकाशन रहा। इस किताब को विद्वान लोगों के साथ–साथ ग्रामीण महिला गायिकाओं ने भी बहुत पसंद किया। इसी क्रम में अब प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल तथा श्री जनमेजय गुलेरिया ने लोकभाव स्वरांजली–भाग दो लिखी। इसमें विविध गीतों का स्वरांकन तथा विश्लेषण है। यह पुस्तक इस सांस्कृतिक धरोहर को भावी पीढ़ी तक पहुंचाने का कार्य करेगी। हमारे लोक गीतों में जो मूल्यगत अनुभव हैं; उन्हें सामने लाएगी। शोधार्थियों के लिए बहुत लाभप्रद होगी। परम्परा व संस्कृति के संरक्षण का लक्ष्य लेकर चल रही हमारी संस्था के लिए ये प्रकाशन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मैं, साहित्यकार प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल व संगीतकार श्री जनमेजय गुलेरिया के इस प्रयास के लिए हार्दिक बधाई देता हूं। हमारी संस्था उनकी आभारी है।

—लक्ष्मी नारायण अग्रवाल

संयोजक कांगड़ा चैपटर (इटैक)

धर्मशाला, जिला कांगड़ा

लोकगीत

विषय-सूची



जनमेजय सिंह गुलेरिया (राज्य एवं राष्ट्रीय शिक्षक सम्मान)
पुत्र स्व. श्रीमती शकुन्तला गुलेरिया व
श्री देस राज गुलेरिया (सेवानिवृत्त प्राचार्य)

शिक्षा

एम.एस.सी., एम. फिल गणित, एम.ए. संगीत, बी.एड, (हि.प्र. वि.वि. शिमला)
संगीत विशारद, संगीत भास्कर, संगीत चूड़ामणि (स्वर्ण पदक) चण्डीगढ़
पी.एच.डी. संगीत (अध्ययनरत) पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

- ❖ शिक्षा व संगीत के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए शिक्षक दिवस पर 5 सितम्बर 2017 को देश के महामहिम राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार से अलंकृत।
- ❖ शिक्षा व संगीत के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने पर प्रदेश की राज्यपाल द्वारा शिक्षक दिवस पर 5 सितम्बर, 2014 को सर्वश्रेष्ठ शिक्षक के रूप में सम्मानित।
- ❖ संस्कृति मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा काँगड़ा के संस्कार गीतों के संगीतात्मक अध्ययन के लिए सीनियर फैलोशिप।
- ❖ संगीत नाटक अकादमी दिल्ली व संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रायोजित काँगड़ा लोक साहित्य परिषद नेरटी की तीन परियोजनाओं में संगीत निर्देशन व स्वरांकन।
- ❖ काँगड़ा के जन्मगीतों की गायन शैली के संगीतात्मक अध्ययन पर शोधप्रबन्ध।
- ❖ आकाशवाणी, दूरदर्शन व विभिन्न राज्यों के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में अनेक प्रस्तुतियां व निर्णायक की भूमिका।
- ❖ टी. सीरीज व के. एम. कंपनी के तीन पहाड़ी ऑडियो व वीडियो कैसटों में गायन व निर्देशन की भूमिका।
- ❖ संगीत विषय पर विश्व ध्यानाधार व कलाकुंज भारती राष्ट्रीय पत्रिका में आलेख प्रकाशित।

रचनाएं :– लोकभाव स्वरांजली (भाग–एक), लोकभाव स्वरांजली (भाग–दो)

सम्मान :– इंडोनेपाल समरसता अवार्ड, भारत ज्योति अवार्ड, राष्ट्रीय प्रतिभा अवार्ड, नेशनल अचीवर अवार्ड फार एजूकेशन एक्सलैंस, डॉ. एस. आर. कृष्णन सद्भावना अवार्ड, हिमालय अवार्ड फार एजूकेशन एक्सलैंस, अमर उजाला एक्सलैंस अवार्ड, अंर्तराष्ट्रीय कर्म श्री अवार्ड तथा विभिन्न स्वायत संस्थाओं द्वारा संगीत व शिक्षा के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए सम्मानित।

- ❖ वर्ष 2009 में लोक संगीत व शास्त्रीय संगीत के संवर्धन हेतु संगीताजली कला केन्द्र की स्थापना जिसके अंतर्गत लोक संगीत, झिंझोटी गायन के संगीतात्मक अध्ययन हेतु संस्कृति मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय प्रतिभा छात्रवृत्ति प्राप्त दो छात्रों का निर्देशन।
- ❖ बाईस वर्ष के अध्यापन काल में संगीत शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों द्वारा जिला, राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर निरन्तर पुरस्कार प्राप्ति के सन्दर्भ में मुख्य प्रेरक व निर्देशक।

संप्रति – राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय खन्यारा–खास में संगीत प्राध्यापक

गांव व डा. रक्कड़–सिद्धबाड़ी, धर्मशाला
मो. : 94180–65132, 98050–65132

ISBN: 978-81-931425-2-3

परोक्ष कथा (कथ्य विश्लेषण)

लोक संस्कृति के वाहक, लोकगीतों की खरी–सच्ची संवेदना तथा कर्णप्रिय धुन को सम्प्रेषित व संरक्षित करने की प्रेरणा इन गीतों के संवेद्य तथा माधुर्य ने दी ...।

कांगड़ा अंचल के जन्मगीतों का भाव–विश्लेषण तथा स्वरांकन, लोकभाव स्वरांजली शीर्षक के अन्तर्गत करने के बाद इसी शीर्षक के अन्तर्गत (भाग–दो) में इस जनपद के प्रणय (संयोग–वियोग) गीत, घटना जन्य वर्णन प्रधान गीत, पाक्षिक गीत, भावनात्मक तनाव से जन्मे त्रासद गीत, व्याख्यायित विश्लेषित व स्वरांकित करने का एक सांझा प्रयास जनमेजय गुलेरिया व मैंने किया है ...। जीवन के भव्य ही नहीं क्रूरतम सत्य भी अत्यन्त सहज भाव से अभिव्यक्त हुए हैं इनमें। इन गीतों में स्त्री चेतना मुखर है। भाव से ही स्पष्ट हो जाता है कि यह स्त्री स्वर है। ... समाज ने अधिकांशतः सौतेली मां को कटघरे में खड़ा किया है। एक गीत में स्त्री अपना पक्ष बेबाकी से सामने रख रही है – "सौकणी दे बच्चे भैणे अपणे नीं बणदे। कितणा भी लाड लडाई दस्सिए।" अर्थात सौतन के बच्चे अपने नहीं बनते। उनसे कितना भी प्यार कर लीजिए ...। मां नहीं बन पाती, स्त्री का दर्द बहुत मार्मिक ढंग से शब्द–बद्ध हुआ है। पुरूष प्रधान समाज के वर्चस्व ने एक सुनियोजित रीति–नीति के अन्तर्गत उसे सिखा दिया है कि उसका अपना स्वतत्र अस्तित्व नहीं है। स्त्री केवल वंश वेल वृद्धि की ही हेतु है। पुरूष को वंशज पाने के लिए पर स्त्री सम्बन्ध तक की स्वतंत्रता की पैरवी करते तथा बहु विवाह की प्रशंसा व सामंजस्य बिठा पाने के गुर सिखाते अनेक गीत हैं। लेकिन वे अन्ततः स्त्री की पीड़ा को सांकेतिक रूप में ही सही, दर्शाते जरूर हैं। जिससे लोक मानस विशेषतया स्त्री मानस की गढ़न व रूपाकार सामने आता है ...।

कबीर व मीरा का प्रभाव असाहित्यिक मन पर भी दिखता है। या कहें कि उन्हें बिना पढ़े भी, उनकी कविता का सनातन सत्य, अनाम रचनाकारों का सहज भाव बोध है। क्योंकि सत्य सार्वभौमिक है। ... 'जाणदी प्रीतां करी दुख भोगणा/भुल्ली नीं करदी मैं प्रीत' (यदि मैं जानती कि प्रेम कर के दुख

भोगना होगा तो भूल कर मैं प्रेम न करती) पंक्तिया, मीरा की ज़मीन पर ला खड़ा करती है – "जो मैं ऐसा जानती प्रीत किए दुःख होए/नगर ढिंढोरा पीटती प्रीत करे न कोए"। सूली ऊपर सेज पिया की किस विधि मिलना होए, की छाया इस गीत में देखी जा सकती है – उआरे भी नाला भाभी पारे भी नाला बिच बिच कुक्कुआं दा डेरा भाभी/कुक्कू कियां बोलदा।" इधर भी पानी से भरा गहरा नाला तो उधर भी। बीच में कुक्कुओं का डेरा (अस्थाई निवास) है। मिलना कैसे हो ? कबीर के इस दोहे की छाया तो एक से अधिक गीतों पर तैरती दिखती है – ऐसा कोई न मिलेया जाके रहिए लागि। सब जग जलता देखेया अपनी अपनी आगि ..."दुःखी ह्रदय को कोई सांत्वना नहीं देता। टूटे फूटे को सीने वाला दर्जी नहीं मिलता। सब अलगर्जी है। सभी अपने में खोए हुए तथा उदासीन हैं।"

कुछ गीत तीखे प्रश्न उठाते हैं। सोचने को विवश करते हैं। जैसे .... "राजे दिए बेड़िए या चिट्टी–चिट्टी चादर ..." कि क्यूं विवाह करके नए जीवन की कल्पना लिए ससुराल आई किशोर वय की लड़की जान दे देने का निर्णय कर लेती है ..." मन में द्वन्द्व भी उठता है। मां–बावा व भाई की स्मृतियां हैं। पति याद हैं। छोटी उम्र का बोध भी है। फिर भी जी नहीं पाती। कथात्मक गीत पढ़ते/सुनते हुए, बात निकलती है। कारण दिखते हैं। छोटी उम्र में शादी हो गई। मायके का लाड़–दुलार और खिलंदड़पन सब छूट गया। दूसरे घर में उस बच्ची से घर–गृहस्थी संभालने तथा धीर–गंभीर बने रहने की अपेक्षाएं हैं ...। एकरस उबाऊ दिनचर्या। साथी परदेस में। सास का व्यवहार रूखा–रूखा ...। अर्थात छोटी उम्र में शादी का निषेध भी इस गीत में है और पराए घर में युवती के साथ सामंजस्य व स्नेह बनाए रखने की ज़रूरत भी रेखांकित हुई है ...। स्त्री ने अपनी तकलीफ व उपेक्षा को समझा है व सामने रखा है ...। परचम उठा कर तथा ऊंचा–ऊंचा बोल कर विरोध प्रदर्शन भले न हो। स्त्री सुलभ धीमा लेकिन दृढ़ स्वर इन गीतों में मिलता है। मानों स्त्री ने अनाम रहते हुए अपनी वृत्ति व ज़रूरत के अनुकूल परिवेश गढ़ने का अभियान चला रखा है ...।

इन लोक गीतों में तीज त्योहार तथा विशेष रूप से 'मेले' वर्णित हुए हैं – मिंजरों का व नन्दपुर का मेला तो मानो जीवन शैली का ही हिस्सा हैं। देवर–भाभी के बीच के खट्टे–मीट्ठे संवाद बहुत आकर्षक हैं ...। कहीं देवर को

तो कहीं भाभी को परस्पर एक आकर्षण, एक दूसरे के प्रति खींचता है। यह समान उम्र तथा एक साथ बिता पाने को उपलब्ध समय का सामान्य सम्मोहन है। साथ–साथ काम करने, उपहार मांगने व देने तथा मेले में संग–संग जाने की ज़िद है ...। भिन्न समाज व समुदाय के स्त्री–पुरूष के प्रेम सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं कि प्रेम, मन का वह सहज उद्वेग है जो किसी मर्यादा या बाधा को नहीं मानता। धर्म न जाति और न ही सामाजिक हैसियत, दो प्रेमी मनों के बीच अवरोध बन पाती है। भले ही जान दे देनी पड़े, परन्तु प्रेम नहीं छूटता। तथाकथित मान–मर्यादा तथा सामाजिकता से समझौता नहीं किया जाता। इस तरह के प्रेम गीतों के नायक तथा नायिकाएं प्रतीक बन गए हैं। ... नृत्य गीतों का बहुत महत्व है। उनकी लय, ताल व गति ऐसी है कि पांव अनायास थिरक उठते हैं। एक विशेषता यह है कि अधिकांश गीतों में पत्नी या प्रिया से नाचने की या साथ–साथ नाचने की मिन्नत व मनुहार है। जो प्रमाण है कि इस घाटी में स्त्री को समान भाव से देखते हुए, उसके स्वच्छन्द झूमने गाने का समर्थन है। अपनी खुशी व प्रतिभा की अभिव्यक्ति का अधिकार है। तथाकथित बौद्धिक समाज में भी ऐसे लोग मिलेंगे जो अपने घर की स्त्रियों का सार्वजनिक रूप से नाचना पसंद नहीं करते ...। यद्यपि मन के सहज उल्लास के प्रकटीकरण का सशक्त माध्यम नृत्य ही है ...।

संवाद शैली में लिखे गए लोक गीतों में नाटकीयता का पुट है। गीतों में हास्य व्यंग्य भाव भी है। मस्ती भरी चुहलबाज़ी तथा छेड़खानी, कहीं कहीं तीखी नोकझोंक जैसी प्रतीत होती है। गीत में बोलों के बहाने से मन में छुपी कई भावनाएं बेबाकी से सामने आ जाती हैं।

यद्यपि लोकगीत अनायास सृजन हैं। परन्तु इनमें सहज ही अलंकारिकता आ गई है। तुलना व उपमा तो सामान्य है। रूपक व उत्प्रेक्षा का भी प्रयोग हुआ है। मानवीकरण का प्रयोग बहुत है। कागा पर तो कितने ही गीतों में संदेशवाहक के चरित्र को रूपायित किया गया है। पेड़–पौधों व परिवेश पर भी मानवीय आत्मा रूपायित हुई है ...। यह प्रकृति से एकात्म होने की स्थिति है। पेड़ पौधों, पशु–पक्षियों, नदी–नालों, वन, पहाड़ व घाटी से लोक मानस का भावनात्मक रिश्ता है, वैचारिक नहीं ...। पर्यावरण की चिन्ता यहां सहज धर्म है। अतिकल्पना अर्थात फैंटेसी के प्रयोग से चीज़ों व स्थितियों को रहस्यमयी बना दिया गया है। मृत्यु बाद अपने साथ हो रहे

व्यवहार को देखना व उसका वर्णन करना, अरबी–फ़ारसी शायरी का प्रभाव कहा जा सकता है। शब्द की लक्षणा तथा व्यंजना शक्ति भरपूर इस्तेमाल हुई है। अपना मंतव्य लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ से ही साधने का प्रयास है। धड़ल्ले से, नहीं कहने का दावा करते हुए, कटाक्ष किए गए हैं ... "असां कुसी जो मंदा नहीं बोलणा। चन्दे दी चान्दनी चन्दे कनैं।" कुछ गीतों की पंक्तियां इतनी सारगर्भित तथा थोड़े शब्दों में इतना अधिक समेटे हुए हैं कि सूक्तियां प्रतीत होती हैं। सन्दर्भित गीत से अलग भी एक मूल्य देती हैं ...। जैसे, हरिए डालि़ए तूं कियां बड्डुणी, खौ़दल़ा पाणी पखला माणू डर लगदा, दिले दा रखणा दरेया, चला चलिए नी भैणों जुगत जे करिए/लड़ना–लड़ाणा मुकाई दस्सिए, मेरे पहाड़ा दियां चान्दी रंग सूरतां जी, उच्चियां–उच्चियां धारा जे बस्सणा/डुगेया–डुगेया डुबणा आदि। खौदल़ा पाणी पखला माणू डर लगदा। मेरेया पाणियां कुडाणियां फिरी कुडैं तूं, गीत में अत्यन्त सटीक तुलना है, खौदले़ पाणी (मटमैले पानी) तथा पखले माणू (अजनबी व्यक्ति) के बीच आन्तरिक संवेद्य को लेकर। दूसरी पंक्ति में यह गीत एक प्रार्थना हो जाती है – मेरेया पाणिया कुडाणियां (पानी जो धरती की सख्त परत बींध कर स्वता बाहर आता है) तू फिर से बाहर आ। यह पानी साफ–स्वच्छ तथा सहज उपलब्ध है। जीवन में इसी तरह के पारदर्शी व प्राकृतिक सम्बन्ध की अपेक्षा की गई है। जिस पर अपरिचय व प्रदूषण का कलुष न हो।

इस भाव–मूल्य, संवेदना व शब्द सौन्दर्य पर आने वाली पीढ़ियों का अधिकार है। जिसमें उन्हें जीवन दृष्टि खोजते हुए, जीवन पर अपनी पकड़ मजबूत करनी है। अपनी ज़मीन को अपना धरातल और अपने परिवेश को निज सम्बल बनाना है। इन लोक गीतों का भावार्थ व लक्ष्यार्थ लिखने के दौरान अत्यन्त निजि व अद्‌भुत अनुभूति हुई। लोक मानस के स्वता–स्फूर्त भाव जगत से गुज़रते हुए और उससे एकान्त साक्षात्कार करते हुए सहज, संवेग बालूकणों को खंगाला तो ऐसे भव्य, मणि–मुक्ता मिले कि मन–प्राण चुंधिया गए ...। यह आलोक पुंज भावी पीढ़ी के लिए ...।

– चन्द्ररेखा ढडवाल

जन्मगीतों का संगीतात्मक पक्ष

लोक संगीत, लोक मानस की सहज अभिव्यक्ति है। यद्यपि प्रत्येक हृदय भावनाओं से परिपूर्ण होता है। परन्तु कुछ ही स्वयं को प्रकट कर पाते हैं। वास्तव में लोकगीतों के अनाम रचनाकार तथा संगीतकार सृजनात्मक प्रतिभा के धनी थे। जीवन के सुख–दु:ख व संघर्ष पर उनके व्यक्तिगत विचार थे। जिन्हें उन्होंने गीतों का रूप दिया। ये रचनाकार अनाम रहकर भी समाज को बहुमूल्य सम्पदा दे गए। लोक संगीत का जन्म मानव के आन्तरिक आह्लाद, सामाजिक उत्सवों, रीति–रिवाजों, त्यौहारों एवं सामूहिक अनुष्ठानों द्वारा हुआ। यह सहज, स्वाभाविक तथा सादे रूप में भावों की अभिव्यक्ति है। प्राकृतिक संगीत ही लोक गीतों की परिभाषा है। लोक संगीत सहज ग्राह्य होने के कारण शीघ्रता से हर उम्र के व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करता है। जीवन से जुड़ी हुई स्थितियां जब लोक गीतों के माध्यम से प्रकट होती है तो अनायास ही रसधार बरसती हैं। इसीलिए लोक संगीत मानव मात्र को सम्मोहित करता है। अलग–अलग अवसरों पर अलग–अलग गीत अपनी सरल स्वरावली और सरल शब्दावली के क्रारण मनुष्य की आत्मा से जुड़ जाते हैं।

आज के समय में हर चीज़ का व्यवसायिक इस्तेमाल हो रहा है। संगीत, साहित्य, लोक संगीत व लोक कलाओं पर बाज़ार प्रभावी है। ग्रामीण परिवेश से हूँ, इसलिए लोक संस्कृति व विशेषतया लोकगीतों से जुड़ा हुआ हूँ। उनका अछूता सौन्दर्य तथा मधुरता मुझे हमेशा से आकर्षित करती रही है। परन्तु जिस तरह लोक–गीत भुलाए जा रहे हैं। जिस तरह इनका मनमाना इस्तेमाल करके, मूलरूप को अनदेखा करते हुए तथा धुन को आकर्षक बनाने के प्रयत्न में मूल सुर के साथ खिलवाड़ हो रहा है। वह चिन्ता का विषय है। इसलिए प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल तथा मैं इनके मूल स्वरूप तथा स्वर सौन्दर्य को बचाए रखने के लिए संकल्पबद्ध हैं। हमारा विनम्र प्रयास रहेगा कि हम लोकभाव स्वरांजली शीर्षक के अन्तर्गत काँगड़ा अंचल के विविध लोंकगीतों पर कार्य करें। इस क्रम में 2015 में लोकभाव स्वरांजली का पहला भाग

प्रकाशित हुआ। जिसमें चौरासी जन्मगीतों का भावार्थ, विश्लेषण तथा स्वरांकन हुआ है। भाग दो में प्रणयगीत, घटना जन्य वर्णन प्रधान गीत, झिंझोटी व पाक्षिक गीत हैं ...। भावी पीढ़ी तक हमारी धरोहर पहुँचे, ताकि उन्हें गीतों के माधुर्य तथा भावमूल्य का ज्ञान हो। ये ज्ञान उन्हें अपनी ज़मीन से जोड़ेगा। अपने पूर्वजों की प्रतिभा तथा सोच से परिचित करवाएगा। उन्हें उड़ान भरनी है। आसमान तक पहुँचना है। परन्तु यह तब ही संभव है जब पैरों तले ठोस धरातल हो। उधार की सोच से भरी गई उड़ान, ऊंचाईयां नहीं देगी। लोकगीतों में गहरे अर्थ तथा मूल्य हैं। जनमानस का आत्मबोध तथा आत्मचिंतन है। जिसकी अंगुली पकड़ कर वे बेफिक्र दूर तक जा सकते हैं। इन लोकगीतों में समृद्ध संगीत है। शास्त्रीय संगीत के रहस्य भी छुपे हैं। सहज स्वरों में परिपक्व लय–सुर हैं।

इसी विषय में मेरे दादा गुरू, वाग्येकार आचार्य वृहस्पति जी ने क़हा है कि, "हमारी वाणी के उतार–चढ़ाव के परिणामस्वरूप, संगीत के सात स्वरों और तीन सप्तकों का विकास हुआ। इसी कारण हमारी चेष्टाओं और प्रयुक्त शब्दों की गति में विविधता आई।"

लोक गीत सरल धुनों में होते हैं। अधिकतर ये गीत स्वर प्रधान नहीं बल्कि लय प्रधान होते हैं। कुछ धुने समान होते हुए भी लय तथा भाव के कारण भिन्न–भिन्न प्रतीत होती हैं। गीतों में टेक पुनरावृत्ति बहुत मनोरंजक होती है। जुगलबंदी भी रहती है तथा गायन विस्तार का भी पर्याप्त अवसर रहता है। लोक गीत समाज का सच्चा चित्र प्रस्तुत करते हैं। इनमें भाव पक्ष की प्रधानता अधिक रहती है और इनका क्षेत्र भी इतना विशाल होता है कि किसी भी सरल व सुमधुर धुन को आत्मसात कर लेता है। लोक संगीत का वातावरण उमंग व तन्मयता में लिप्त होता है। इसलिए यह मर्म को स्पर्श कर हृदय तंत्री को झंकृत करता है। संकलित लोकगीतों में अधिकतर, भूपाली, पहाड़ी, पीलू, मालकौंस, जोग, विहाग, देस, देशकार, झिंझोटी, यमन, खमाज़, काफी, तिलक कामोद, वृन्दावनी सारंग तथा भैरवी आदि रागों के समकक्ष स्वर मिले हैं। कई गीतों में संगीत पक्ष को उभारने में लोकगायक,

शास्त्रीय संगीत के सुर व ताल से अनभिज्ञ होते हुए भी स्वाभाविक रूप से कण, मीण्ड, मुर्की व अलंकरणों का प्रयोग कर लेते हैं। लोकगीतों में प्रायः सरलता का भाव निहित होता है व ज्यादातर लोकगीत स्थाई भाव में रचित हैं। लोकगीत स्वर की अपेक्षा लय प्रधान अधिक होते हैं। लोक संगीत शास्त्रीय संगीत के नियमों से दूर मन की सहज स्वतः स्फूर्त अभिव्यक्ति है। शास्त्रीय संगीत के नियमों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किए बिना इन गीतों का संगीतात्मक पक्ष दिखना सम्भव भी नहीं है। क्योंकि पृष्ठभूमि में अपनी अनगढ़ता में ही सही, शास्त्रीय संगीत लोकसंगीत में विद्यमान है। इसलिए संगीतात्मक विश्लेषण के लिए मुख्य तत्वों के आधार पर इन लोकगीतों का स्वरांकन किया गया है। क्योंकि गीतों का तब तक कोई अर्थ नहीं रह जाता जब तक कि इनकी ध्वनियों को स्वरलिपियों में न बांधा जाए। ऐसी स्थिति में ही इस संगीतात्मक परम्परा का निर्वहन सम्भव है।

लगभग सभी लोकगीतों में दीपचन्दी (स्थानीय भाषा में चांचर के नाम से जाना जाता है) कहरवा व खेमटा में लयबद्ध है। चौदह मात्रा में रचित गीतों को लम्बी भाख के रूप में गाने का प्रचलन है। इन गीतों में ठहराव मौलिकता, माधुर्य, सरलता, करूणा व आनन्द की अनुभूति तथा हृदयस्पर्शिता है। खेमटा व कहरवा की बारह व आठ मात्रा वाले गीतों में हर्ष, कर्णप्रियता, उल्लास व श्रृंगार रस की प्रधानता अधिक है। कई गीतों में एक समान स्वर, थाट, राग तथा जाति होने पर भी स्वर विशेष पर ठहराव, न्यास के स्वर, स्वर संगीत, कण, खटका, मींड, मुर्की आदि अलंकरणों के कारण एक दूसरे से अलग मधुरता विद्यमान है। ये स्वर रचनाएं राग, रस के सिद्धान्त के आधार पर रचित ना होने पर भी गीत के भाव, समय अथवा अवसर की दृष्टि से पूर्ण तथा स्टीक नज़र आती हैं।

इन लोक गीतों के प्रचार–प्रसार में त्यौहार, मेले व उत्सव संबंधी सांस्कृतिक आयोजन बहुत महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। आकाशवाणी, दूरदर्शन, गीत एलबम इत्यादि की भी इन लोक गीतों के प्रचार–प्रसार में अहम भूमिका रही है। मुझे प्रसन्नता है कि इन सारे माध्यमों से लोक गीत परम्परा के

निर्वहन के पर्याप्त अवसर मुझे भी मिले हैं और उन्हीं से इच्छा जगी कि इनके मौलिक स्वरूप को रखते हुए इनका प्रालेखन किया जाए। अधिकांश लोकगीत लोकगायकों द्वारा गाए गए हैं। जो कैसेट, सीडी, डीवीडी, इन्टरनेट व यू–टयूब में उपलब्ध हैं, उनको भी सुना। परन्तु गीतों के मूल रूप–स्वरूप तक पहुँचने के लिए गाँव–गाँव जाकर गायिकाओं से मिले। थोड़ी–थोड़ी भिन्नता लगी परन्तु प्रयत्न करके एक सामान्य शब्दावली तक पहुँचने के लिए वयोवृद्ध महिलाओं से भी मिलकर बहुत कुछ सीखा व जाना। उन सभी के प्रति हम कृतज्ञ रहेंगे।

स्वर्गीय माँ श्रीमती शकुन्तला गुलेरिया जी की स्मृतियां सदैव मेरी प्रेरक रही हैं, उन्हें मेरा नमन। पिताजी देसराज गुलेरिया के आशीर्वाद से ही मैं लोक संस्कृति के क्षेत्र में कार्य कर पा रहा हूं। मेरी पत्नी निशा गुलेरिया मेरे पल–पल के संघर्ष और सुख की साक्षी हैं। मुझे प्रो. चन्द्ररेखा ढडवाल के साथ कार्य करते हुए बहुत सुखद अनुभव हुए है। मैं उनका और प्रो. प्रकाश ढडवाल का ऋणी हूँ।

जनमेजय गुलेरिया

1. डुग्गी-डुग्गी नदियाँ

डुग्गी-डुग्गी नदियाँ बड़ी तेज धारां हो
हो अड़ेया पतणा देया तारूआ
कि बेड़ी मेरी पार लाई दे .....

नदियाँ कनारे बैठी छैल़ छबिलिये हो
हो अड़िये बाँकियें नारे
तू छम-छम कजो रोई हो .....

कजो हसदा अड़ेया, पतणा देया तारूआ
हो अड़ेया मना देया मारूआ
कि याद मिंजो तेरी आई हो

कजो रूसदी अड़िये दुखां दिये मारिये
हो अड़िये गमां दिये मारिये
कि याद तिज्जो कुदी आई हो .....

निक्के-निक्के फँगडु उच्चियाँ उडारां हो
हो मेरेया बाँकेया सज्जणा
दूर परदेसां जाणा हो .....

भावार्थ :— यह गीत प्रेम गीत है। इसमें युवती प्रेमिका द्वारा प्रेम निवेदन है। वह घर से निकल कर पत्तण (नदी का वह स्थान जहां उसे पार करने के लिए नाव या बेड़ी होती है) पर पहुंच कर प्रिय को कहती है – नदी गहरी है और धारा बहुत तेज है। पत्तण के तारू (जो तैर कर नदी पार करने में सक्षम हो) मेरी नौका को पार लगा दो। वह कहता है – नदी किनारे बैठी छैल छबीली सुन्दर नार (स्त्री) तू छम–छम कर के क्यों रो रही है। दुखों की मारी और सताई हुई तू किससे रूठ कर आई है। तुझे किसकी याद आ रही है। वह कहती है – तू क्यूं हंसी कर रहा है। मेरे मन को जीत लेने वाले मुझे तेरी ही याद आई है। मेरे मन के नज़दीकी और मुझे लुभाने वाले, तेरी प्रीत मुझे यहां ले आई है। मेरे पंख छोटे–छोटे हैं। परन्तु उड़ान ऊंची है। मेरे सुन्दर सजन, तेरे साथ परदेस जाकर रहना है। इस गीत में दार्शनिक अर्थ या अभिप्राय भी है। संसारिक दुःखों अर्थात माया में जकड़ी चेतना मुक्ति की

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	ध़	ध़-	–	सा	रे-	म	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	डु	गी	ऽ	डु	गी	ऽ	ऽ
रे	म	–	सा	–	–	–	ध़	–	–	सा	–	–	–
न	दि	ऽ	याँ	ऽ	ऽ	ऽ	ब	ड़ी	ऽ	ते	ऽ	ऽ	ज
रे	म	–	प	ध	–	–	प	–	–	–	–	–	–
धा	ऽ	ऽ	रां	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
ध	प	म	–	–	–	–	–	–	म	म	प	ध	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	हो	अ	ड़े	या	ऽ
प	प	–	ध	–	प	म	म	म	म	प	म	ग	रे
प	त	ऽ	णा	ऽ	दे	या	ता	रू	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ
रे	–	–	सा	–	–	–	–	–	सा	सा	रे	म	प
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	कि	बे	ड़ी	मे	री
प	ध	–	प	–	म	–	म	–	–	–	–	–	–
पा	र	ऽ	ला	ऽ	ई	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

प्रबल कामना लिए खेवट यानि ईश्वर से इस जीवन रूपी नदिया को पार करवाने की प्रार्थना कर रही है। जागरूक हुई चेतना को ईश्वरीय सत्ता ने मानों आमंत्रित किया है।

2. संझा पेईयां

पंझा पेइयां दिन घर गेया दीपक मंगदा नी नुए तेल वे
काहे दा बणेया नीं सस्सू दीपक काहे दा हुन्दा नीं सस्सू तेल वे
मिट्टिया दा बणेया नीं नुए दीपक सरूआं दा हुन्दा नीं नुए तेल वे
सैह कियां रैहन्दिया माइयां जिन्हा दे पुत्त परदेस वे
मुंहे नैं अन्न नीं लान्दियां रैहन्दियां निरमल पेट वे
संझा पेइयां दिन घर गेया दीपक मंगदा नी नुए तेल वे
सैह कियां रैहन्दिया भैनड़ा जिन्हा दे बीर परदेस वे
किल्लयां जांदिया सौवरे मुड़ मुड़ दिखण प्योकियां देस वे
पंझा पेइयां दिन घर गेया दीपक मंगदा नी नुए तेल वे
सैह कियां रैहन्दिया नारियां जिन्हा दे कंत परदेस वे
सिरे नीं लांदियां कांघियां गल़ बिच रूल़दे काल़े केस वे
संझा पेइयां दिन घर गेया दीपक मंगदा नी नुए तेल वे

भावार्थ :— इस गीत को 'संझकड़ा', अर्थात संध्या समय, गाया जाने वाला गीत कहा जाता है। इस गीत में युवा पत्नी, अपने वियोग का वर्णन करती है। अपने दुःख को महसूस करती हुई वह अपने पति की मां व उसकी बहन का दुःख भी समझना चाह रही है। गीत संवाद शैली में है। सास तथा बहू की बतकही है। सास कहती है कि सांझ हो गई। दिन अपने घर चला गया। (इसी प्रसंग से, पिया का घर पर नहीं होना, दुःख दे जाता है।) बहू, दीपक तेल मांग रहा है। बात बढ़ाती हुई बहू पूछती है कि सासू मां, दीपक किस चीज से बनता है और तेल काहे का होता है ? उत्तर मिलता है कि बहू दीपक मिट्टी की होता है और तेल सरसों के बीजों से बनता है। फिर बहू अपने दर्द को मानो मां के दर्द पर रूपायित करती हुई पूछती है कि वे माएं कैसे रहती हैं जिनके बेटे परदेस में चले जाते हैं। सास अपना हाल बताती है जैसे . . मुंह में अन्न का दाना नहीं डालती और खाली पेट रहती हैं। ... वे बहनें कैसे रहती हैं, जिनके भाई घर में नहीं होते। ये बहनें अकेली ससुराल जाती

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
--	--	--	--	--	पध़्	ध़सा	सा-
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	संऽ	झाऽ	पेइ
सारे	गरे	रेसा	-सा	--	सारे	रेसा	रे
यांऽ	ऽऽ	दिऽ	ऽन	ऽऽ	घऽ	रऽ	गे
ध़-	--	--	--	--	पध़्	ध़सा	सा-
याऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	दीऽ	पऽ	कऽ
सारे	गरे	रेसा	सा-	--	सारे	गसा	--
मंग	दानी	नुऽ	एंऽ	ऽऽ	तेऽ	ऽल	ऽऽ
रे-	सा-	--	--	--	--	--	--
वेऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएगी।

हैं और मुड़–मुड़ कर मां–बाबा के देस की ओर देखती हैं। फिर अपनी पीड़ा पर अंगुली धरती है। वे नारियां कैसे रहती हैं जिनके कंत (पति) परदेस में होते हैं। सास कहती है कि वे बाल नहीं बनाती। काले केश गले में फैलते है ... अर्थात वे श्रृंगार नहीं करती। यह गीत भाव की दृष्टि से जितना उदास है। उससे ज्यादा इसकी धुन उदासी भरी है।

3. ठण्डी-ठण्डी हवा झुलदी

ठण्डी-ठण्डी हवा झुलदी झुलदे चीलां दे डालू
जीणा काँगड़े दा, जीणा काँगड़े दा
धण गदियाँ दे धारा चुगदे, सैला खबलू फुलणुआं चुगदे
गद्दी दिक्खी दिक्खी हसदा, ओ बांका सजेया गद्दणी बालू
जीणा कांगड़े दा, जीणा काँगड़े दा
खाणे जो मिलदा भत भटूरू, उच्ची धारां ते पौण छरूडू
रिड़िया-रिड़िया डंगरे चारदे, गीतां गान्दे पेई ग्वालू
जीणा कांगड़े दा, जीणा काँगड़े दा
मर्द घराँ दे बाह्‌र कमान्दे, छणकदे हथडु मधाणियाँ घुमाँदे
गद्दी दिक्खी दिक्खी हसदा, ओ बांका सजेया गद्दणी बालू
जीणा कांगड़े दा, जीणा काँगड़े दा।

भावार्थ :— कांगड़ा की मिट्टी की पहचान करवाता यहां के मूल निवासी, गद्दी जाति की जीवन शैली को अभिव्यक्त करता यह गीत अत्यन्त चर्चित व मनमोहक है। ... ठण्डी–ठण्डी हवा झूलती है। जिसमें चील (चीड़) के पेड़ों के डालू (छोटी–छोटी डालियां) लहराती हैं। इस हवा और जलवायु अर्थात कांगड़ा में जीना ही वास्तविक जीना है। बहुत सुखद परिवेश है। गद्दियों के धण (भेड़–बकरियों का समूह) पहाड़ पर हरी–भरी दूब चुगते है। रिड़ियों (छोटी ऊंचाई की पहाड़ियां) पर गद्दी पशु चराते हैं। ग्वालू (ग्वाले) मोहक गीत गाते घूमते हैं। .... घर के मर्द बाहर रोज़गार के लिए जाते हैं। (यहां का मुख्य व्यवसाय सेना ही रहा है) तो घरों में छणकदे हाथ (चूड़ियां पहने, संगीत ध्वनी छोड़ते हाथ) मधाणी घुमाते हैं। अर्थात मक्खन निकालते हैं। ... घर आया परदेसी पिया गद्दी देख–देख कर हंसता है और प्रशंसा में कहता है कि गद्दणी, तुझे बालू (नथ) बांका (सुन्दर) सज रहा है। कांगड़ा में बसना बहुत सौभाग्यशाली है। यहां का प्राकृतिक परिवेश तथा लोग, सब बहुत अच्छा है।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	–	–	सा	-सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ठ	ण्डी
सा	-रे	म	म	मप	पध	धध	धप
ठ	ण्डी	ह	वा	झुल	दीऽ	झुल	ऽदे
प	ध	प	मग	रे	–	रे-	प
ची	लां	दे	डाऽ	ल्लू	ऽ	जीऽ	णा
ध	प	म	म	म	–	--	धध
कां	ग	ड़े	ऽ	दा	ऽ	ऽऽ	धण
सां-	सां-	रें-	--	सां-	ध-	--	धप
गऽ	दिऽ	याऽ	ऽऽ	देऽ	ऽऽ	ऽऽ	धाऽ
-ध	सां-	सांध	प-	म-	--	--	धप
ऽरा	ऽऽ	चुऽ	गुऽ	देऽ	ऽऽ	ऽऽ	सैऽ
सां-	--	रें-	रें-	सां-	ध-	--	पप
लाऽ	ऽऽ	खऽ	बऽ	लूऽ	ऽऽ	ऽऽ	फुल
ध-	सां-	ध-	पम	म-	--	--	--
णुऽ	आंऽ	चुऽ	ऽग	देऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सा-	सा-	सारे	म-	म-	म-	मप	पम
गऽ	दुदीऽ	दिऽ	क्खीऽ	दिऽ	क्खीऽ	हस	दाऽ
ध-	-ध	पप	ध-	पम	म-	रे-	-रे
बांऽ	ऽका	सजे	याऽ	गद	णीऽ	बाऽ	ऽलू
रे-	-प	पध	म-	म-	--	म-	--
जीऽ	ऽणा	काँऽ	गऽ	ड़ेऽ	ऽऽ	दाऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

4. बन्सरिये हो भ्हैणे बड़ी ओ प्यारिये

ब्नसरिये हो भ्हैणे बड़ी ओ प्यारिये

चल बिंदरावण जाई बस्सिए

सौकणी दे बच्चे ओ भैणे अपणे नी बणदे

जितणा भी लाड़ लड़ाई दस्सिए

बन्सरिये हो भ्हैणे बड़ी ओ प्यारिये .....

चिड़ियां दे बच्चे ओ भैणें अपणे नी वणदे

जितणी भी चोग चुगाई दस्सिए

बन्सरिये हो भ्हैणे बड़ी ओ प्यारिये .....

सर्पां दे बच्चे ओ भैणें अपणे नी वणंदे

जितणा भी दुद्ध प्याई दस्सिए

बन्सरिये हो भ्हैणे बड़ी ओ प्यारिये .....

ावार्थ :— यह गीत जीवन के इस सच्च को रेखांकित करता है कि जो त्री अपनी कोख से बच्चे को जन्म नहीं दे पाती उसे मां होने का गौरव और मत्व नहीं मिल पाता। इस भाव को और मन के दुःख को व्यक्त करते इए ीत में स्त्री बांसुरी के माध्यम से स्वयं को ही सम्बोधित करते कहती है कि हन वांसुरी, चल वृन्दावन जाकर बसें। समाज के उलाहनों व कटुताओं से चने के लिए प्रभु शरण में जाने की इच्छा है। कटु परन्तु सनातन सत्य पर ंगुली धरते वह कहती है कि चिड़िया के बच्चे अपने नहीं बनते, उन्हें कितनी ी चोग (दाना) खिला ले। अन्ततः उड़ जाते हैं। सांप के बच्चों को भी जतना चाहे दूध पिला लीजिए। वे आपके नहीं बनेंगे। ये उदाहरण देने से र्व वह कहती है कि सौतन के बच्चे अपने नहीं बनते। जितना भी लाड़ जता ीजिए। अर्थात जो जिसका स्वभाव हैवो वैसा ही रहेगा। हर कोई अपने मूल वरूप में निवास करता है।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	सा	म	–	म	–	ध	प
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ब	न	ऽ	स	ऽ	रि	ऽ
म	ध	प	म	ग	ग	–	म	प	म	म	म	निप	म
ये	ओ	ऽ	भै	ऽ	णे	ऽ	ब	ड़ी	ऽ	ओ	ऽ	ऽऽ	च
ग	ग	–	सा	–	सा	नि	सा	ग	–	म	–	म	ध
या	रि	ऽ	ये	ऽ	ऽ	ऽ	च	ल	ऽ	बिं	ऽ	द	ऽ
प	–	म	म	ग	ग	–	ग	म	–	प	–	म–	ग
रा	ऽ	ऽ	व	ऽ	ण	ऽ	जा	ई	ऽ	ब	ऽ	स्सि	ऽ
म	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
ए	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियां पर गाई जाएंगी।

5. चिट्टी चिट्टी चादर

चिट्टी चिट्टी चादर जी मच्छी कण्डे सीती ऐ
कुन्ही चादर दित्ती है जी कुन्ही चादर सीती ऐ
कुन्ही इस पर डोल़ेया जी इत्र फुलेल वे
बाबैं चादर दित्ती है जी अम्मा चादर सीती ऐ
बीरें मेरे डोल़ेया जी इत्र फुलेल वे

पूणी भी नीं मुकदी जी तन्द भी नीं टुटदी
सस्स भी नीं बोलदी नुंए पाणिए जो जाणा ऐ
पूणी भी मुकी गेई जो तन्द भी टुटी गेई
सस्सू नैं भी बोली दित्ता नुंए पाणिए जो जाणा ऐ

डुब्ब-डुब घड़ोलुआ जी सिरे देया बैरिया
साजन मेरे निहाल़दे जी नदिया दे पार वे
इक मन बोलदा जी नदिया मैं डुबी मरां
दुआ मन बोलदा जी बाल़्लड़ी बरेस वे

इक बख खाई लेया जी जले दियां जलकियां
दुआ बख रहि गेया जी सप्पड़े दे हेठ वे
अम्मा मेरी रोवंदी जी बाबा मेरे झूरदे
बीर मेरे तोपदे जी नदिया चभेर वे

भावार्थ :— अत्यन्त प्राचीन यह गीत, पिछले कई दशकों से लोगों तथा लोक गायकों की ज़ुबान पर है। यह गीत दो एकदम अलग धुनों में गाया गया है ... पुरानी धुन में गाया जाने वाला यह गीत चिट्टी—चिट्टी चादर ..... से आरम्भ होता है। बहुत त्रासद शब्दावली है। वास्तव में यह मायका छोड़ कर ससुराल पहुंची, कच्ची उम्र की व्यथा कथा है। यहां मां—बाप से दूर, मायके से मिली भेंट के माध्यम से घर को याद कर रही है। ... सफेद रंग की चादर पर मच्छी कण्डे (चार खाने की कढ़ाई) से कसीदाकारी हुई है। कल्पनाओं में खोई युवती स्वयं से ही पूछ रही है कि यह चादर किसने दी है ? किसने इस पर कढ़ाई की है और किसने इत्र—फुलेल छिड़का है ? फिर कहती है कि पिता ने चादर दी, मां ने कड़ाई की और भाई ने इत्र छिड़का ...। इसके बाद ससुराल का परिवेश है ...। अकेली बैठी चर्खा कात रही है न तो पूनी खत्म हो रही है और न ही तन्द (धागा) टूट रही है। सास भी नहीं कह रही कि पानी लाने जाना है ...। पूनी बन जाती है। तन्द भी टूट जाती है। सास भी कह देती है कि बहू पानी लाने जाओ ...। इसके बाद बैचेन मन की अतिकल्पना है कि पति नदी के पार उसकी प्रतीक्षा में है। परन्तु वहां तो

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
ध़	–ध़	रे	–रे	सा	ध़	–	रे
चि	ट्टी	चि	ट्टी	चा	ऽ	ऽ	द
रे	–	–	गरे	रे	सा	रे	ग
ए	ऽ	ऽ	जी	म	च्छी	कं	डे
रे	–	–	सा	ध़	–	–	–
सी	ऽ	ऽ	ती	ऐ	ऽ	ऽ	ऽ
ध़	ध़	रे	रे–	सा	ध़	–	रे
कु	न्ही	चा	दर	दि	ऽ	ऽ	ती
रे	–	–	गरे	रे	सा	रे	ग–
ए	ऽ	ऽ	जी	कु	न्ही	चा	दर
रे	–	–	सा	सा	–	–	–
सी	ऽ	ऽ	ती	ऐ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

कोई भी नहीं है ... कोमल मन दबाब नहीं सह पाता। वह सोचती है कि जान दे दे। इस पर भी दुविधा होती है कि छोटी उम्र है। अन्ततः आत्मघाती प्रवृत्ति हावी हो जाती है। मृत्युपर्यन्त कल्पना में वह देख रही है कि उसके तन का एक हिस्सा जल की जलकियों (मछलियों) ने खा लिया और दूसरा सप्पड़ (रपटीला बड़ा पत्थर) के नीचे रह गया। अर्थात उसके नहीं रहने का प्रमाण तक नहीं मिला ... मां रोती है तो पिता झूरते (अफसोस व पश्चाताप से त्रस्त) है। भाई नदी के चारों ओर बहन को ढूण्ढते हैं ...। छोटी उम्र में हुई शादी, शरीर ही नहीं मन के स्तर पर भी भारी बैठती है। खेलने–कूदने की उम्र में लाडली बेटी, नए माहौल में आ जाती है। जहां उससे कुछ अलग तरह की अपेक्षाएं हैं। घर–गृहस्थी चलाने के लिए उसे गढ़ने पर ज़ोर दिया जाता है ... पति भी नौकरी के लिए बाहर है। मायके का लाड़ और ससुराल का परायापन उसे उदास व तनाव–त्रस्त बना देता है। ... बेटी का दर्द बरसों पहले लोक–संस्कृति का सरोकार रहा है।

6. राजे दीये बेड़िये

राजे दीये बेड़िये नी सौकणी तू मेरिये,
तेरे पर डुल़ी हो रिहा मियां जसरोटिया
चिट्‌टी चिट्‌टी चादर हो मच्छी कण्डे सीतीऐ,
तेरे पर डुली हो रिहा मियां जसरोटिया
कुन्हीं चादर दितीऐ कुन्हीं चादर सीतीऐ,
कुण लेई आया बडड़ा प्यार ऐ
अम्मा चादर दीत्तिऐ, भाबो चादर सीतीऐ,
भाई लई आया बडड़ा प्यार ऐ
पूणी नी ओ मुकदी तन्द नी ओ टुटदी,
सस्स नी ओ बोलदी पाणियें जो जाणा ऐ
डुब्ब बो घड़ोलुआ सरे देया बैरिया,
सज्जण निहाल़दे निम्बुआं दे बाग ऐ
इकमन बोलदा नदिया मैं डुब्बी मरां, दुआमन बोलदा बालड़ी बरेस ऐ,
इक बक्ख खाई लेया जलें दियां जलकिया,
दुआ बक्ख फस्सी रेया सपड़े दे हेठ ऐ
अम्मा स्हाढ़ी रोन्दी ऐ बापू स्हाढ़ा झूरदा,
भाई स्हांजो तोपदा नदिया दे फेरां ऐ

भावार्थ :— चिट्टी–चिट्टी चादर ..., गीत को इस धुन में भी गाया जाता है। बल्कि इन दिनों यह ज्यादा प्रचलित है। पूरा प्रसंग इससे पूर्व दिए गए गीत का है। केवल मुखड़े की दो पंक्तियां भिन्न हैं। परन्तु यही दो पंक्तियां आत्म–घात के कारण को बदल देती हैं। यहां यह गीत शुरू होता है – राजे दिए बेड़िए नी सौकणी तू मेरिए ...। अर्थात पत्तण (दरिया पार करने वाला वह स्थान जहां प्रशासन नौका व्यवस्था करता है) पर लगी राजा की नौका, तू मेरी सौतन हो गई है। तुझ पर मेरा मियां जसरोटिया (राजपूत उपजाति) विमोहित हो गया है अर्थात बार–बार तेरे संसर्ग में आकर वह नदी पार प्रिया से मिलने जाता है। उसके बाद वह सफेद कढ़ाई की गई चादर के बहाने मां पिता तथा भाई को याद करती है। फिर उसे ससुराल की एकरस दिनचर्या व्यथित करती हैं कल्पना में पति को नदी के पार प्रतीक्षा रत्त देखती है। परन्तु यथार्थ कुछ और है तो नदी में डूब जाने का निर्णय ले लेती है। फैंटेसी के प्रयोग से वह मृत्यु बाद अपना भयानक अन्त देख रही है। मां व बाबा को रोते–कल्पते देखती है तो भाई को उसकी खोज में नदी के चारों ओर भटकते देख रही है ...। युवा पत्नी को पति के घर से बार–बार नदी पार जाना संशय में डालता है। शक के बीज जहरीलीं नागफणी बन कर उसे निगल जाते हैं ...।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	सा	सा	सा	ध
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	रा	जे	दि	ये
प	प	म	ध	प	–	–	प
ऽ	बे	ऽ	ड़ि	ये	ऽ	ऽ	नी
प	धप	पम	म	प	ध	प	म
सो	कऽ	णीऽ	तू	ऽ	मे	ऽ	रि
म	–	–	–	मरे	–	–	सा
ये	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सा	सा	सा	ध	प	प	म	मध
ते	रे	प	र	ऽ	ड़ु	ली	होरि
प	–	–	प	प	ध	प	म
हा	ऽ	ऽ	ऽ	मि	यां	ज	स
प	ध	प	प	म	–	–	–
ऽ	रो	ऽ	टि	या	ऽ	ऽ	ऽ
अंतरा :							
गरे	–	–	सा	ध	धसां	ध	प-
ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	कु	नी	चा	दर
म	ध	सं	सांध	सां	–	–	नि
ऽ	दि	ऽ	तिऽ	ऐ	ऽ	ऽ	ऽ
ध	–	–	–	पध	सानि	ध	प
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ
प	धप	पम	मप	मप	ध	प	प
कु	न्ही	चाऽ	दर	ऽऽ	सी	ऽ	ती
म	–	–	–	गरे	–	–	स
ऐ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सा	ध	प	ध	पम	म	–	धप
कु	ण	ले	ई	ऽ	आ	ऽ	ऽ
प	–	प	–	प	धप	प	म
या	ऽ	ऽ	ऽ	ब	ड	डा	ए
प	ध	प	म	म	–	–	–
ऽ	या	ऽ	र	ऐ	ऽ	ऽ	ऽ
गरे	–	–	सा	–	–	–	–
ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

7. कदूं घरें औणा

कालुआ मजूरा हो डेरा तेरा दूरा हो,
बीती गेया फागुणा, तूं कुदूं घरें औणा हो ...
मेरेया परेमिया हो, दिलां देया मैह्रमा हो
बीती गेया फागुणा, तूं कदूं घरें औणा हो ...

नालुआं च रूड़दा तूं, पत्थरां नैं घुल़दा हो
खून तेरा डुल़दा हो
मेरेया परेमिया हो, दिलां देया मैह्रमा हो
बीती गेया फागुणा, तूं कदूं घरें औणा हो ...

धुप्पा तूं जल़दा हो, पाल़ैं तू ठरदा हो
खड्डां बणां रूल़दा हो
मेरेया परेमिया हो, दिलां देया मैह्रमा हो
बीती गेया फागुणा, तूं कदूं घरें औणा हो ...

दियालि़या दे बबरू हो, लोहड़िया दी खिचड़ी
सैह तिज्जो कियां बिसरी
मेरेया परेमिया हो, दिलां देया मैह्रमा हो
बीती गेया फागुणा, तूं कदूं घरें औणा हो ...

कागा उड़ाए गोरी, बिन्दलू लगाए गोरी
कुंदे ताईं सज्जणा
मेरेया परेमिया हो, दिलां देया मैह्रमा हो
बीती गेया फागुणा, तूं कदूं घरें औणा हो ...

भावार्थ :— यह अत्यन्त भावपूर्ण गीत है। जिसमें मज़दूरी करने के लिए गए पति से घर आने का अनुरोध है। मेहनत करने वालों के जीवन की कठिनाइयों का चित्रण बहुत सजीव व उदास कर देने वाला है .... कालुआ (नाम) तेरा डेरा (अस्थाई निवास स्थान) बहुत दूर है। तू कब घर लौटेगा। मेरे मन के महरम (परिचित); मेरे प्रिय फागुन बीत गया ... कब घर आएगा। श्रमिक जीवन की मुश्किलों को याद करती हुई पत्नी कहती है कि तू नालों में भटकता होगा। पत्थरों से संघर्ष करते हुए तेरे अंगों से खून बहता होगा। धूप में तपता होगा और पाले (सर्दी) में ठिठुरता होगा मेरे प्रिय। कब आओगे। अन्तिम पंक्तियों में बहुत उदास व भावुक होकर कहती है कि तुम्हें

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
सा	ध़	ध़	सा	–	सा	–	रे	म	प	प	ध	सांध	प
का	ऽ	लु	आ	ऽ	म	ऽ	जू	ऽ	ऽ	रा	ऽ	होऽ	ऽ
प	ध	–	प	म	रे	–	रे	म	प	प	ध	सांध	प
डे	रा	ऽ	ते	ऽ	रा	ऽ	दू	ऽ	ऽ	रा	ऽ	होऽ	ऽ
प	ध	–	प	म	रे	–	रे	म	प	प	ध	सांध	प
बी	ती	ऽ	गे	ऽ	या	ऽ	फा	ल्गु	ऽ	णा	ऽ	तूंऽ	ऽ
प	ध	–	प	–	म	–	प	–	–	म	–	–	–
क	दूं	ऽ	घ	ऽ	रें	ऽ	ओ	ऽ	ऽ	णा	ऽ	हो	ऽ
अन्तरा													
ध	सां	–	सां	–	सा	–	नि	सा	–	नि	ध	प	–
ना	लु	ऽ	या	ऽ	च	ऽ	रू	ड़	ऽ	दा	ऽ	तूं	ऽ
प–	ध	–	प	–	म	–	रे	म	–	प	–	ध	–
पत	थ	ऽ	रां	ऽ	नैं	ऽ	घु	ल़	ऽ	दा	ऽ	हो	ऽ
प	ध	–	प	म	रे	–	रे	म	–	प	–	ध	–
खू	न	ऽ	ते	ऽ	रा	ऽ	डु	ल़	ऽ	दा	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

दीपावली के बबरू (खमीरे वाले आटे के मीठे पकवान) तथा सक्रांति की खिचड़ी कैसे भूल गई ? प्रियतम फागुन बीत गया तुम कब घर लौटोगे...। प्रतीक्षा में गोरी श्रृंगार करती है। पर गुम–सुम अकेली कब तक रहेगी। किसके लिए सजेगी ...।

8. परदेसी स्हाड़े मामले

नी नौकरा ! अम्ब पक्के हो घरैं आ
कि रसें भरियां डालि़यां
नी गोरिये दिले दा रखणा दरेया
परदेसी स्हाड़े मामले

नी नौकरा छोटड़ा द्योर खराब
कि डालि़या मरोड़दा
नी गोरिए द्योरे जो तूं समझा
परदेसी स्हाड़े मामले

नी नौकरा निम्बू पके हो घरैं आ
कि रसें भरियां डालि़यां
नी गोरिये दिले दा रखणा दरेया
परदेसी स्हाड़े मामले

नी नौकरा दाखां पक्कियां घरें आ
कि रसें भरियां डालि़यां
नी गोरिये दिले दा रखणा दरेया
परदेसी स्हाड़े मामले

नी नौकरा छोटड़ा द्योर खराब
कि डालि़या मरोड़दा

भावार्थ :— इस गीत में प्रियतम परदेस में नौकरी कर रहा है। घर में प्रतीक्षा रत्त पत्नी उदास है। उसे बुलाने के कई—कई बहाने बना रही है। कहती है कि आम पक गए हैं। आम के पेड़ों की शाखें रस से भर उठी हैं। तूं घर आ जा। दूर बैठा प्रिय उसे सांत्वना देना चाहता है। कहता है कि तू मन छोटा मत कर। इस बिछोड़े को दिल से मत लगा। दिल को बड़ा और उदार रखने के लिए वह दिल को दरिया करने को कहता है अर्थात दरिया जितना गहरा तथा प्रवाह मान। फिर वह दूसरा बहाना खोजती है। कहती है कि छोटा देवर खराब है। वह डालियां मरोड़—मरोड़ कर तोड़ता है। पति कहता है कि देवर को तू ही समझा सकती है। क्योंकि हम तो परदेसी हैं। परदेस के मामले हैं। आ नहीं सकते। कुछ कह नहीं सकते। इसके बाद निम्बुओं का हवाला देती हुई कहती है कि निंबू पक गए हैं। अब तो आ जा।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	–	–	–	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	नी
रे	म	प	–	–	–	ध	प
नौ	क	रा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
म	म	प	प	म	प	ध	प
ऽ	अं	ब	प	क्के	हो	घ	रैं
म	रे	–	सा	रे	म	प–	–म
आ	ऽ	ऽ	कि	र	सें	भरि	ऽयां
–	प	–	म	–	–	–	स
ऽ	डा	ऽ	लि़	यां	ऽ	ऽ	नी
रे	म	प	–	–	–	ध	प
गो	रि	ये	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
म	म	प	प	म	प	ध	प–
ऽ	दि	ले	दा	र	ख	णा	दर
म	रे	–	सा–	रे	म	प–	–म
या	ऽ	ऽ	पर	दे	सी	स्हा	ऽड़े
–	प	–	म	–	–	–	सा
ऽ	ऽ	मा	ऽ	म	ले	ऽ	नी

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

इस बार भी मन को बड़ा रखने की सलाह। पति नहीं चाहता कि पत्नी उदास तथा दुखी रहे। अंगूरों के पकने की बात करती है। दाक्ख अर्थात किशमिश के पकने की बात करते हुए, प्रिय को घर आने का न्यौता देती है ...। पति परदेसी होने की विवशता जताते हुए, उससे खुश रहने का अनुरोध करता है।

9. काल़िए नी कजल़ोटिए

काल़िए नी कजल़ोटिए नी भैणे
काल़जू पैंदड़ी पीड़ वे
जिन्हा दे कारण कजल़ा बान्दीआं
सै वो जानी परदेस वे

अपूं तां चले ओ नौकरी जी डोला
घरे बिच रहि खड़ोई वे
अगें जान्दे पिच्छे मूड़ी नईयों दिखदे
नैणा ते कितड़ा रोई वे

मेया काल़ूआ मन मारूआ भाईया
मिन्जो भी पार लगायो
हत्थे दी दिन्नी हां मुंदरी ओ भाईया
गल़े दा चौसर हार वे

कैत लांणी तेरे हत्थे दी मुंदरी
कैत लांणा चौसर हार वे
अद्धिया राती साड़े रह् गोरिए
कल पार लगायो वे

अप्पू कटानियाँ बेड़ा बणवानी हां
बाईं दे चप्पू रखानी हां
काल़ेयाँ केसां दे रस्से बटांदी हां
भरी भरी पार लगायो

भावार्थ :— मुख्य रूप से इस गीत में परदेस गए पति की याद में बिसुरती पत्नी का दुःख चित्रित हुआ है। परन्तु अन्तिम पंक्तियों में स्त्री के प्रति पुरूष की लोलुप दृष्टि से उपजी दुर्भावना भी चित्रित हुई है। जिसके विरोध स्वरूप वह स्वयं को ही ख़त्म कर लेने का निर्णय लेती है। ... गीत शुरू होता है विरह वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति से। पत्नी कजलोटी अर्थात् काजल बनाने में प्रयुक्त काला पत्थर को सम्बोधित करते हुए कहती है कि बहन मेरे कलेजे में पीड़ा उठती कि जिनके कारण मैं काजल लगाती हूँ। वह प्रियतम तो परदेस में है। याद करती है कि जब वह नौकरी के लिए घर से निकले मैं घर में खड़ी निहारती रही परन्तु उन्होंने पलट कर नहीं देखा। मेरी आंखे कितना रोई ...। बावली सी वह नदी किनारे आकर नौका वाले से पार उतारने का अनुरोध करते हुए कहती है कि बदले में मेरी अंगूठी तथा नाक की नथनी ले लो। वह कहता है कि तुम्हारे गहने लेकर मैं क्या करूंगा। तुम

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	प़	–	प़	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	का	ऽ	लि़	ऽ
सा	–	–	नि़	–	नि़	–	नि़	–	–	नि़	–	सा	रे
ए	ऽ	ऽ	नी	ऽ	क	ऽ	ज	ऽ	ऽ	लो़	ऽ	टि	ऽ
ग	रे	–	सा	–	नि़	–	नि़	–	–	नि़	–	सा	–
ए	ऽ	ऽ	नी	ऽ	भै	ऽ	णे	ऽ	ऽ	का	ऽ	ल़	ऽ
रे	ग	–	म	–	ग	–	रे	सा	नि़	सा	–	रे	ग
जु	ऽ	ऽ	पै	ऽ	न्द	ऽ	ड़ी	ऽ	ऽ	पी	ऽ	ड़	ऽ
रे	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सा	–	सा	–
वे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जि	ऽ	न्हा	ऽ
रे	म	–	म	–	म	–	ग	रे	–	सा	रे	रे	–
दे	ऽ	ऽ	का	ऽ	र	ऽ	ण	ऽ	ऽ	क	ऽ	ज	ऽ
ग	रे	–	सा	–	नि़	–	नि़	–	–	नि़	–	सा	–
ल़ा	ऽ	ऽ	बा	ऽ	न्दी	ऽ	आं	ऽ	ऽ	सै	ऽ	वो	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

आधी रात हमारे रहां रहो। सुबह पार लगा दूंगा ...। प्रिय के प्रेम में डूबी और विरह में व्याकुल प्रिया जान दे देने पर उतारू हो जाती है। वह कहती है कि मैं स्वयं को कटा कर के बेड़ा बनवाऊंगी। बाहों के चप्पू तथा काले केशों की रस्सियां बटवाऊंगी ... सहृदयता पूर्ण मुझे पार उतार देना ...। स्त्री के विरोध की पराकाष्ठा है ... जान दे देना।

10. जुगत जे करिए

चला चलिए नी भैणो जुगत जे करिए
लड़ना-लड़ाणा रूकाई दस्सिए
कित्तणे मरे भैणों कित्तणेयां मरना
देसां दा बैर मटाई दस्सिए
धरा बंडदी लीक दिलां जो नी बंडदी
हाकमां जो समझाई दस्सिए
जिस नारा अपणा कंत गवया
क्या तां गलाई पतियाई दस्सिए
मांऊ दे जिगरे दे हौल नीं मुकदे
कित्तड़े जयकारे लगाई दस्सिए
बर्फा च रहि कुंगले अंग गल़ादें
बांके जुआन बचाई दस्सिए
बतनां दी खातर मरना नीं लोड़ी
बतनां दी खातर जी दस्सिए

भावार्थ :– यह लोकगीत भाव–बोध की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण गीत है। इसमें युद्ध के भीषण परिणामों का वर्णन करते हुए उसे रोकने का संकल्प दोहराया गया है। गीत एक आह्वान से प्रारम्भ होता है। चलों बहनों, हम मिलकर कोई तरकीब करें और लड़ना/लड़ाना रूकवा कर दिखाएं। कितने नहीं रहे, कितनों के नहीं रहने का अन्देशा आगे भी है। आओ, देशों के बीच का बैर–विरोध मिटा कर दिखाएं। दोनों देशों (भारत व पाकिस्तान) के हाकिमों को समझाएं कि धरती को बांटती लकीर दिलों को नहीं बांटती। जिस पत्नी ने अपना पति खो दिया, उसे क्या कह कर समझाया जा सकता है। सपूत को खोकर तड़पती मां के हृदय के हौल (घबराहट की हिलोरें) नहीं

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
प़	नी़	-	सा	-	ग	रे	सा	ग	रे	सा	-	नी	-
च	ला	ऽ	च	ऽ	लि	ऽ	ये	नी	ऽ	भै	ऽ	णे	ऽ
सा	रे	सा	सा	-	-	-	नि	-	-	प़	म़	-	-
जु	ग	ऽ	त	ऽ	ऽ	जे	क	रि	ऽ	ये	ऽ	ऽ	ऽ
प़	नी़	-	सा	-	सा	ग	रे	-	-	सा	-	-	नी़
ल	ड़	ऽ	ना	ऽ	ल	ऽ	ड़ा	ऽ	ऽ	णा	ऽ	ऽ	रू
नी़	सा	-	ग	रे	सा	नि़	सा	-	-	-	-	-	-
का	ई	ऽ	द	ऽ	स्सि	ऽ	ए	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

मिटते। उसके बेटे की कुर्बानी के कितने भी जयकारे लगाते रहिए। बर्फ में रह कर कोमल अंग गंवाते सुन्दर जवानों को बचा कर दिखाएं। देश की खातिर मरने की ज़रूरत न हो। देश के लिए जी कर दिखाएं। ... युद्ध की त्रासदी स्त्रियां झेलती हैं, मां के, पत्नी के व बहन के रूप में। उन्हीं की ओर से देश के व्यवस्थापकों से यह संकल्पबद्ध अनुरोध है।

11. उड़ी जायां

उड़ी जायाँ उड़ी जायाँ काल़ेया कागा
इक वो सुनेह्ड़ा लेई जायाँ हां
किस जो मैं देणा तेरा सुख वो सुनेह्ड़ा
किस जो मैं देणी बाँकी चिठ्ठियाँ
अम्मा जो देणा मेरा सुख वो सुनेहा
बापुए जो देणी बाँकी चिट्ठियाँ
किधिए मढ़ाऊ तेरी कालि़या चुजाँ
किधिए मढाऊ काले़ फंगा
सुने मढ़ायां मेरी कालिया चुजाँ
रूपे मढ़ायां काले़ फंगा उड़ी जायाँ हो

भावार्थ :— कांगड़ा जनपदीय लोक गीतों में मायके की यादों में उदास तथा किसी भी तरह अपने मां बाबा से सम्पर्क साध पाने के लिए चेष्टारत युवती के भावों का अत्यन्त प्रभावी चित्रण हुआ है। इस गीत में मानवीकरण अर्थात काले काग में मानवीय आत्मा को रूपायित करते हुए उससे संवाद किया गया है। माना जाता है कि काग संन्देश वाहक तथा पाहुन के आने का पूर्व सूचक होता है। श्राद्ध पक्ष में पितृ अर्पण का निमित्त भी बनता है। युवती मित्रवत् उससे बतियाती है। काले कागा तुम मेरा एक सन्देश लेकर उड़ जाओ। काग कहता है कि यह सन्देश किसे देना है तथा जिस चिठठी पर सन्देश लिखा है वह किसे थमानी है। युवती उतर में कहती है मेरी मां तक मेरा सुख सन्देश पहुंचाना और बाबा को मेरी चिट्ठी देना। अपने मायके जाते कागा पर उसे लाड़ उमड़ता है। कृतज्ञ हो कर वह पूछती है, तुम्हारी चोंच को सुन्दर रूप देने हेतू किस धातु में मढ़ांउ और पंखों को किस धातु

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
ग	ग	रे	ग	प	प़	म	ग	ग	रे	सा	नि़	सा	-
उ	ड़ी	ऽ	जा	ऽ	यां	ऽ	उ	ड़ी	ऽ	जा	ऽ	यां	ऽ
रे	म	-	ग	सा	रे	-	सानी़	म़	प़	ध़	नी़	ध़	म़
का	ऽ	ऽ	ले़	ऽ	या	ऽ	का	ऽ	ऽ	गा	ऽ	ऽ	ऽ
म़	प़	-	नी़	-	-	नी़	सा-	सा	-	ग	रे	ग	रे
इ	क	ऽ	वो	ऽ	ऽ	सु	नेह	ड़ा	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ई
सा	नी़	-	सा	-	-	-	ध़	नी़	ध़	म़	-	-	-
जां	ऽ	ऽ	याँ	ऽ	ऽ	ऽ	हां	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

का रंग दूं। काग कहता है कि वह उसकी चोंच को सोने तथा पंखों को चान्दी में मढ़ा दे। किसी के उपकार के लिए उपकृत महसूस करना एक महत्वपूर्ण मूल्य है। आज के समय में व्यक्ति, व्यक्ति के किए के प्रति धन्यवादी नहीं है। इस गीत में मनुष्य से इतर भी यह भाव ज्ञापित हुआ है।

12. भला मियां मनेजरा

भला मियां मनेजरा ओ
राहे बिच बंगलू तेरा, तेरी सोंह राहे बिच बंगलू तेरा
पल भर बोहणा दे

भला मियां मनेजरा ओ
मालतियाँ दिया छौआं, तेरी सोंह मालतियाँ दिया छौआं
छिन भर बोहणा दे

भला मियां मनेजरा ओ
कामलुये दिया बाईं, तेरी सोंह कामलुये दिया बाईं
दो घुट पीणा दे।

भला मियां मनेजरा ओ
गोदिया बालक याणा, तेरी सोंह गोदिया बालक याणा
दुद्ध प्याणा दे।

भला मियां मनेजरा ओ
जेठ महीने दिया धुप्पां, तेरी सोंह जेठ महीने दिया धुप्पां
छतरिया ताणी दे।

भावार्थ :— लोक मानस तथाकथित व्यवहारिकता तथा मान—मर्यादाओं द्वारा नियंत्रित नहीं होता। कांगड़ा के लोक गीतों में पर—स्त्री प्रेम की कहानियां तो हैं ही ... पर—पुरुष के आकर्षण के वशीभूत स्त्री चरित्र भी चित्रित हुए हैं। एक गांव से दूसरे तक जाते हुए रास्ते में कहीं—कहीं डाक बंगले हुआ करते थे। जंगलात के अफसरों के बंगले होते थे ...। उसी डाक बंगले के मैनेजर या जंगलात के अफसर को यह गीत सम्बोधित है ...। युवती विवाहित है, एक शिशु की मां भी है। परन्तु वह इस मैनेजर के प्रति आकर्षित है ...। कहती है कि मियां मनेजरा, रास्ते में तेरा बंगलू (छोटा बंगला) है। मुझे पल भर बैठने देना। वहां मालती का झाड़ भी है। मुझे उसकी छांव में सुस्ताने देना। पास ही पानी की बावड़ी है, पानी पीने देना। वह वहां ज़्यादा देर तक बैठी रहने के बहाने ढूंढती है। कहती है कि गोदी में छोटा बालक है। उसे दूध

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
ध़	ध़	सा	सा	रे	–	सा	–
भ	ला	ऽ	मि	यां	ऽ	ऽ	म
रे	म–	रे	म	प	–	–	–
ने	ऽऽ	ऽ	ज	रा	ऽ	ऽ	ऽ
ध	–	–	–	प	–	म	–
ओ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
–	प–	–	–	म	प	ध	प
ऽ	राहे	बि	च	बं	ग	लू	ऽ
म	–	रे	–	रे	म	(ध)प	–
ते	ऽ	रा	ऽ	ते	री	सों	ह
–	प–	–	–	म	प	ध	प
ऽ	राहे	बि	च	बं	ग	लू	ऽ
म	–	रे	–	रे	म	प	ध
ते	ऽ	रा	ऽ	प	ल	भ	र
म	प	प	म	म	–	–	–
बो	ह	णा	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी

पिलाने के लिए वह आश्रय चाहती है। अन्तिम परिच्छेद में कहती है कि जेठ महीने (मई–जून) की कड़ी धूप है। मेरी छतरी खोल दो ... अर्थात वह उससे बातचीत तथा सामीप्य के बहाने खोज रही है ...। अनुरोध सरल–स्पष्ट है। छल नहीं है। इसलिए यह आकर्षण व प्रेम भव्य लगता है।

13. सहजैं सहजैं हस्सणा

उच्चियाँ उच्चियाँ धारा जे, पुजणा
डुगेयां डुगेयां डुबणा, खुशियाँ दे मेल़े घड़िया पलां दें
सहजैं-सहजैं हंसणा हां .....
लाई प्रीतां चौमुखी फल़णा, बैर बरोधा नैं लोकां मुकणा
भरियां बंदूकां मूंडे न रखिये अणमथेआं इन्हा चलणा
खुशियां दे मेल़े ....
सर्प सपोलू जंगला च बसदे, अगणें द्वारे ऐ ता नी सदणे
अज छेई रैह्गे कल छेई रैह्गे, परसो इन्हा आई डसणा
खुशियां दे मेल़े ....
पैरां छेकड़ संगड़ा रस्ता, हुंकार भरी भरी असां हंडेया
कैत पाणे ए खुल्लड़े रस्ते, जे सौगी नीं चलणा
पीड़ कलेजे लाई नीं रखणी, अणवरेयां भी एह् बरीह् जाणी
सुकेयां सुकांयां पल़-पल़ बल़णा, सिन्नेयां धुखी-धुखी मुकणा

भावार्थ :– इस गीत में अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यावहारिक ज्ञान देने का प्रयास है। जो व्यक्ति जितना शिक्षित व विद्वान् होता है, सफल होकर ऊंचाइयों तक पहुंचता है उसे उतना ही विनम्र व शिष्ट होना चाहिए ......। गीत का मुखड़ा इसी भाव को रेखांकित करते हुए कहता है कि ऊंची धारा अर्थात पहाड़ पर पहुंचने के क्षणों में मन गहराइयों में डूबा रहना चाहिए। पांव शिखरों की ऊंचाइयों पर हो और हृदय घाटियों से समरस हो। खुशियों के मेले घड़ी–दो घड़ी के लिए होते हैं। सहज भाव से संयमित रहते हुए ही हंसना चाहिए। अर्थात सफलता की खुशी मनाने में एक शालीनता अपेक्षित है। प्रेम व सद्भाव से मानव जाति का चतुरमुखी विकास होता है। वैर–विरोध और द्वेष से मनुष्य पतन व विनाश के अन्धे कुएं की ओर बढ़ता है। सांप व सांप के बच्चे जंगलों में बसते हैं। आगंन–द्वार नहीं बुलाए जाने चाहिए। एक–दो दिन डरे डरे रह लेंगे। फिर अपने वास्तविक स्वभाव में आ जाएंगे। पहले, पांव रखने भर को रास्ते होते थे। आगे–पीछे चलते हुए, बात–चीत में कटते थे। ये खुले रास्ते क्या करेंगे यदि हमें साथ–साथ नहीं चलना है। पीड़ा (दर्द)

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
प़	प़	–	ध़	–	–	–	सा	–	–	सा	–	–	–
उ	च्चि	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ	ऊ	चिं	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ
सा	–	–	रे	–	ग	सा	रे	–	–	सा	–	–	–
धा	ऽ	ऽ	रा	ऽ	जे	ऽ	पु	ज	ऽ	णा	ऽ	ऽ	ऽ
रे	ग	–	ग	–	–	प	ग	ग	रे	सा	–	–	–
डु	गे	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ	डु	गे	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ
(ग)रे	रे	–	सा	–	–	–	–	–	–	ध़	–	प़	म़
डु	ब	ऽ	णा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
प़	प़	–	ध़	–	सा	–	ध़	–	–	(प)म़	–	–	–
खु	शि	ऽ	यां	ऽ	दे	ऽ	मे	ऽ	ऽ	ले़	ऽ	ऽ	ऽ
प़	प़	ध़	सा	–	सा	–	रे	–	–	सा	–	–	–
घ	ड़ि	ऽ	यां	ऽ	प	ऽ	लां	ऽ	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ
रे	ग	–	ग	–	–	–	ग	ग	–	रे	सा	–	–
स	ह	ऽ	जैं	ऽ	ऽ	ऽ	स	ह	ऽ	जैं	ऽ	ऽ	ऽ
रे	रे	–	सा	–	–	–	ध़	–	–	(प)म़	–	–	–
हं	स	ऽ	णा	ऽ	ऽ	ऽ	हा	ऽ	ऽ	हां	ऽ	ऽ	ऽ

ास्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

कलेजे से लगा कर नहीं रखनी चाहिए। बिना बरसे भी बरस जाएगी। सूखे ार्थात दुख–दर्द से अछूते लोग सहज ही मुक्ति पा जाएंगे परन्तु नम हृदय ुआं–धुआं होकर समाप्त होंगे।

14. नींबुआ दे बागे कपड़े मैं धोआँ

निंबुआँ दे बागे कपड़े मैं धोआँ, साबण रहि गेया थोड़ा
जिन्हां परदेसां दितड़ी ओ बाबुल, पेई गेया ओ बछोड़ा
मैं छम-छम ताँ रोआं

बागे दे खुऐं कंघी मैं बांदी, दुक्खन सिरे दे बाल़
जिन्हां परदेसां दित्तड़ी ओ बाबुल, दुखड़ा रोआं कुस वात
मैं छम-छम ताँ रोआं

बागे दे खुऐं मैं चरखी जे लान्दी, लम्मी रखांदी मैं डोर
जिन्हां परदेसां दितड़ी ओ बाबुल, मिलेया नीं कोई होर
मैं छम-छम ताँ रोआं

मेरे बाबुल दा दिल थोड़ा, मैं छम-छम ताँ रोआं
अल्हा जाणे मोला वे जाणे, कितने साल बछोड़ा
मैं छम-छम ताँ रोआं, मैं छम-छम ताँ रोआं

भावार्थ :— इस गीत में बेटी ससुराल में अपने पिता को सम्बोधित करके अपने हृदय की पीड़ा को अभिव्यक्त कर रही है। ... नींबुओं के बाग में मैं कपड़े धो रही हूं। साबुन थोड़ा रह गया। बाबुल, मुझे बिछोड़ा मिल गया। इसी बाग में मैं कंघी से बाल बनाती सोचूं कि अपना दुःख किस से रोऊं ..। नींबुओं के बाग के कुंए में मैं चर्खी लगवाती हूं। लम्बी रखती हूं डोर। बाबुल, किस परदेस मुझे ब्याह दिया। तुम्हें मिला नहीं कोई और ... ? ध्वनि

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	ध़	ध़	सा	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	नि	बु	आं	दे
रे	–	सा	–	–	रेम	म	–
बा	ऽ	गे	ऽ	ऽ	कप	ड़े	मैं
प	–	ध	–	–	प	ध	प
धों	ऽ	आँ	ऽ	ऽ	सा	ब	ण
प	म	म	–	म	प	प	–
र	हि	गे	या	थो	ऽ	ड़ा	ऽ
–	–	–	–	ध़	ध़	सा	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जि	न्हा	प	र
रे	–	सा	–	–	रेम	म	–
दे	ऽ	सां	ऽ	ऽ	दित	ड़ी	ओ
प	–	ध	–	–	प	ध	प
बा	ऽ	बु	ल	ऽ	पे	ई	गे
प	म	म	–	म	प	प	म
या	ऽ	ओ	ब	छो	ऽ	ड़ा	मैं
प	ध	ध	प	प	म	म	–
छ	म	छ	म	ताँ	ऽ	रो	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

साम्य से मन की बात अभिव्यक्त की गई है। अन्तिम पंक्तियों में कहती है कि मेरे बाबुल का दिल छोटा है। मेरे अल्लाह ! मेरे मौला मुझे पता नहीं कितना बिछोह दे दिया है ... मैं यही सोच–सोच कर छम–छम रोती हूं।

15. जे तू चलेया नेफा नौकरी

ने तू चलेया नेफा नौकरी,
भो मेरे गल्ले दे हारे लैंदा जायां, छैला ओ ...
ने तिजो लग्गे मेरी बेदणा,
ालैं लाई कने सौयां, नैणा देआ लोभिया।

जे तू चलेयां नेफा नौकरी,
ओ मेरे सरे दे सालुए लैंदा जायां, छैला ओ ...
जे ओत्थू चलै ठण्डी बात तां
तम्बू ताणी करी बौह्यां, नैणा देआ लोभिया।

जे तू चलेया नेफा नौकरी,
ओ मेरे नक्के दे बालुए लैंदा जायां, छैला ओ ...
जे तिज्जो लग्गै मेरी बेदणा,
इस मेरा परछोआं बणायां, नैणा देआ लोभिया।

जे तू चलेया नेफा नौकरी,
ओ मेरे गरी तां छुहारे लैंदा जायां, छैला ओ ...
जे तिज्जो लग्गै कन्ता भुख वो
बही मोर्चे च खायां, नैणा देआ लोभिया।

जे तू चलेया नेफा नौकरी,
ओ मेरे हत्थे दे चूड़े लैंदा जायां, छैला ओ ...
जे तिज्जो लग्गे मेरी बेदणा,
ताहलू हिक्का कने लायां, नैणा देआ लोभिया।

भावार्थ :— इस गीत में, नेफा की सीमा पर नौकरी के लिए जाते पति के प्रति युवती पत्नी अपनी भावनाएं व्यक्त करती है। उसे पति के समक्ष आने वाली मुश्किलों की चिन्ता है। जो तन व मन दोनों स्तरों पर झेलनी होंगी। वह कहती है कि हे मेरे रूपवान प्रिय, यदि तुम नेफा जा रहे हों तो अपने साथ मेरे गले का हार अर्थात कैंठा, लेते जाओ। तुम्हें मेरी याद सताए तो इसे छाती से लगाकर सोना। फिर उसे दूसरी बात का ध्यान आता है कि यदि वहां ठण्डा मौसम हुआ तो, वह कहती है कि मेरी ओढ़नी साथ ले जाओ। बर्फ पड़े और ठण्ड लगे तो तम्बू की तरह तान कर सुरक्षित बैठना। फिर कहती है कि यदि तुम नौकरी पर जा रहे हो तो मेरे नाक की बेसर साथ ले जाओ। यदि तुम्हें मेरी याद आए तो इसे मेरी परछाईं मानकर जी बहला लेना। भूख का ध्यान करते हुए सलाह देती है कि अपने साथ गरी (नारियल) व छुआरे लेते जाओ ताकि कुछ नहीं मिलने पर पेट भर सको। अन्त में वह अपना चूड़ा (नई

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	प़	–	–	नि़	–	सा	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जे	ऽ	ऽ	तू	ऽ	च	ले
रे	म	ग	रे	सा	नि़	–	सा	–	–	–	–	रे	–
या	ऽ	ऽ	ने	ऽ	फा	ऽ	नौ	ऽ	ऽँ	ऽ	ऽ	क	ऽ
म	–	–	ग	–	रे	–	रे	ग	–	रे	–	सा	–
री	ऽ	ओ	मे	ऽ	रे	ऽ	ग	ले़	ऽ	दे	ऽ	हा	ऽ
नि़	–	सा	रे	ग	रे	–	सा	–	–	नि़	–	म	–
रे	ऽ	ऽ	लैं	ऽ	न्दा	ऽ	जा	ऽ	ऽ	यां	–	छै	ऽ
म	–	म	ग	–	रे	–	रे	ग	–	रे	–	सा	–
ला	ऽ	ओ	मे	ऽ	रे	ऽ	ग	ले़	ऽ	दे	ऽ	हा	–
नि़	–	सा	रे	ग	रे	–	सा	–	–	नि़	–	म	–
रे	ऽ	ऽ	लै	ऽ	न्दा	ऽ	जा	ऽ	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

दुल्हन द्वारा कुहनियों तक पहनी गई प्लास्टिक की लाल चूड़ियां) ले जाने को कहती है कि उसकी याद आने पर इसे कलेजे से लगा लेना। इस तरह वह यह संकेत कर रही है कि वह नई ब्याहता है जिसे पति के सीमा की रक्षा हेतु जाने की वजह से बिछोह सहना पड़ रहा है। गीत 'नयनों के लोभी' उसके सौन्दर्य–उपासक अर्थात प्रिय को सम्बोधित है। कांगड़ा जनपद के अधिकांश युवक सेना में भर्ती होते हैं। विवाह के एकदम बाद बिछुड़ती पत्नी की विरह वेदना, पति के माध्यम से प्रकट हुई है।

16. जुग जियो धारा देयो गुजरो

जुग जियो धारा देओ गुजरो
जुग जियो धारा देओ गुजरो
देणा मेरे गार्डा जो बसेखा हो

गार्ड मेरा भोला जंगलाती हो
दिने सदणा ता ईन्दा राती हो

ठण्डा-ठण्डा मगडू रा पाणी हो
कियां करी पीणा मेरी जानी हो

ठण्डा-ठण्डा मगडू रा पाणी हो
छांबा लाई पीणा जानी मेरी हो

सुख दुख चार तां देहाड़े हो
फिरी असां मांणू बणी जाणा हो

जुग जियो धारा देओ गुजरो
देणा मेरे गार्डा जो बसेखा हो

भावार्थ :– इस गीत में जंगलात (वन–विभाग) के बाबू से बढ़ रही प्रेम की पींगों की मस्त हिलोरें हैं। धार (पहाड़) के गूजर समुदाय के लिए जीवन की शुभकामनाओं से गीत शुरू होता है .... तुम सब युगों तक जियो और फलो फूलो। मेरे गार्ड बाबू (वन–रक्षक) को संदेश देना। फिर जैसे बहलाना चाहती है कि उसमें और बाबू में कोई वैसा सम्बन्ध नहीं है। बस मेरा बाबू भोला–भोला जंगलाती है। दिन को बुलाऊं तो रात को आता है। उसके लिए

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
सा	सा	म	म	–	म	ग	ग	म	–	ध	–	नी	–
जु	ग	ऽ	जि	ऽ	यो	ऽ	धा	रा	ऽ	दे	ऽ	ओ	ऽ
सां	नी	–	सां	–	–	–	नी	–	–	सां	–	–	–
गु	ज	ऽ	रो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
नी	नी	–	ध	म	म	ग	म	ध	–	नी	–	सा	नी
दे	णा	ऽ	मे	ऽ	रे	ऽ	गा	र्डा	ऽ	जो	ऽ	ब	ऽ
ध	ध	ग	म	–	–	–	ग	ध	म	ग	–	सा	–
से	खा	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

गगड़ू (मिट्टी का गोलाकार बर्तन) में पानी रखा है। जो शीतल है। कैसे पिया जाएगा। फिर स्वयं ही उत्तर देती है कि छांवा (हाथों की ओक) लगा कर पीना होगा। अन्तिम पंक्तियों में पहाड़ के जीवन की कठिनाइयों पर दार्शनिक विमर्श है कि हमारे ये सुख–दुख चार दिनों के हैं। फिर हम भी सुख–सुविधाओं से सम्पन्न इन्सान होंगे।

17. तेरे मात्थे जो बिन्दला

तेरे मात्थे जो बिन्दला लाणा गोरिये,
नूरपुरे दीए खतरेटिये, तेरे मात्थे जो ....
हरीपुर नूरपुर ठण्डियां न छावां,
बेई लेयां सौगी तां उतरै थकौआं
बैठणा नीं दिन्दा थाणेदार गोरिये
नूरपुरे दीए खतरेटिये, तेरे मात्थे जो ....
सिरे पर घड़ा तेरे घड़े पर गागर,
भजी जांदा घड़ा तेरा सिजी जांदी चादर
चादरी दा मुल कुन्ही देणा गोरिये,
नूरपुरे दीए खतरेटिये, तेरे मात्थे जो ....
रोटियां पकांदियां थालिया च पांदि आं,
उप्पर रेशमी रूमाल ढकांदी आं
रूठड़ा कन्त मनाणा गोरिये
नूरपुरे दिए खतरेटिये, तेरे मात्थे जो ....
दराणियां-जठाणियां पाणिये जो जांदियाँ,
मिंजो दिक्खी दिक्खी नैं मुंहे फुलांदिआं
गोदिया बालक याणा गोरिये,
नूरपुरे दिए खतरेटिये, तेरे मात्थे जो ....

भावार्थ :— कांगड़ा जिला के नुरपुर नामक स्थान से सम्बद्ध यह गीत चित्रात्मक व बिम्ब प्रधान है। खतरेटिए अर्थात खत्री युवती को सम्बोधित गीत उसे शृंगारित करने से आरम्भ होता है। कहा गया है तुम्हारे माथे पर बिन्दला (बड़ी सी बिन्दिया) लगाऊंगा। (एकमात्र बिन्दी चेहेरे को कई कई गुणा सौन्दर्य मंडित कर देती है) हरिपुर व नूरपुर में घने पेड़ों की ठण्डी छांव है। चढ़ाई चढ़ती जान थक जाती है परन्तु थानेदार बैठ कर सुस्ताने नहीं देता। युवती के सिर पर घड़ा है। घड़े पर गागर है। घड़ा टूट जाने से चादर अर्थात ओढ़नी भीग जाती है। इसका मूल्य कौन चुकाएगा ? बाहर के काम के बाद घर लौटी युवती को अपने रूठे कन्त (पति) को मनाना है। वह रोटियां पकाकर एक थाल में रखती है और उस थाल को रेशमी रूमाल से ढक कर पति को मनाने के लिए जाती है। अन्तिम पंक्तियों में युवती कह रही है कि देवरानियां तथा जेठानियां काम–काज में लगी हैं। वह पानी भरने के लिए जाते उसे देख कर मुंह फुला रही हैं। अर्थात नाराजगी जता रही हैं कि वह क्यों बैठी है। पर वह क्या करे उसकी गोदी में छोटा बच्चा है। यह गीत एक युवा पत्नी व मां को घर से बाहर व घर के भीतर मिलते व्यवहार पर केन्द्रित है। इस गीत को सामान्यता शृंगारिक गीतों की श्रेणी में रखा जाता है पर इसमें हाट–बाज़ार की चुहल बाजी तथा एक युवा बहु से घर–परिवार की अपेक्षाएं एक दूसरी कहानी कहती है।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	–	–	रे	रे
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ते	रे
सा	–	धप	ध	सा	–	सा	–
मा	ऽ	त्थे	जो	बि	न्द	ला	ऽ
–	रे	ग	गम	ग	रे	सा	ग
ऽ	ला	णा	गोरि	ये	ऽ	ऽ	ऽ
रे	–	–	रेग	सा	ध	सा	रे
ऽ	नू	ऽ	रपु	रे	ऽ	दी	ए
ग	प	ग	रे	सा	ध	रे	रे
ख	त	रे	टि	ये	ऽ	ते	रे
सा	–	धप	ध	सा	–	सा	–
मा	ट	त्थे	जो	बि	न्द	ला	ऽ
–	सानि	धप	पध	सा	–	सा	–
ऽ	हरि	पुऽ	रऽ	नू	र	पु	र
–	रेग	म	म	ग	रे	सा	ग
ऽ	ठंडि	याँ	न	छा	ऽ	वां	ऽ
रे	म	–	–	प	–	–	मग
ऽ	बैठ	णा	नी	दिं	दा	ऽ	ठाणे
म	–	–	गरेसा	ग	–	रे	–
दा	ऽ	र	गोरि	ये	ऽ	ऽ	ऽ
रे	–	–	रेग	सा	ध	सा	रे
ऽ	नू	ऽ	रपु	रे	ऽ	दि	ये

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

18. मेरा कच्च दा बंगला हो

मेरा कच्च दा बंगला हो, हो बालमां
पैर रखदी दा चकनाचूर हो बालमां

मिंजो बेसर घड़ाई दे हो, हो बालमां
नक पह्नदी दा डिगदा नूर हो बालमां

मिंजो कैंठा घड़ाई दे हो, हो बालमां
गल पह्नदी दा डिगदा नूर हो बालमां

मिंजो कंगण घड़ाई दे, हो बालमां
हत्थ पह्नदी दा डिगदा नूर हो बालमां

मिंजो झांझरा घड़ाई दे हो, हो बालमां
पैर पह्नदी दा डिगदा नूर हो बालमां

भावार्थ :— यह गीत गिद्दे (विवाह के हल्दी–तेल अनुष्ठान के बाद तथा बारात जाने के बाद रात का हंसी–ठिठोली भरा नृत्य) में गाया जाता है। लोक नारियां इस पर झूम कर नाचती हैं ...। इसमें अतिकल्पना (फैंटेसी) के भंग होने के बाद की वस्तुस्थिति का चित्रण है ... बालमा से युवती अपने मन के भाव सांझा कर रही है ... मेरी कल्पनाओं में कांच का सुन्दर बंगला है पर उस पर पांव धरते ही वह चकनाचूर हो जाता है ...। अर्थात वह चाहती है कि कांच के बंगले (भव्य व सुन्दर) की उसकी कल्पना साकार की जाए ... एक–एक करके वह आभूषणों की मांग रखती है ... मेरे लिए नथ (नाक का गहना) घड़वा दो। मैं नाक में पहनूंगी तो नूर (दैवी सौन्दर्य) डिगेगा अर्थात प्रकट होगा। गले के लिए कैंठा (हार) बनवा दो। पहनकर मैं सुन्दर दिखूंगी। कंगन और झांझर घड़वा दो। ये मेरे सौन्दर्य को बढ़ाएंगे। युवा पत्नी या प्रियतमा कल्पना में स्वयं को आभूषणों में सजी– धजी देखते हुए,

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
--	--	--	--	--	धसा	रेम	म-
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मेरा	कच्च	दाऽ
पध	धम	मप-	--	रे-	सा-	सा-	सासा
बंग	लाऽ	होऽ	ऽऽ	होऽ	बाल	मांऽ	पैर
रेम	मग	गरे	रेसा	सारे	रेनी	सा-	रेसा
रख	दीतां	चक	नाऽ	चूऽ	ऽर	होऽ	बाल
सा-	धसा	रेम	म-	पध	धम	मप-	--
मांऽ	मिंजो	बेस	रघ	ढ़ाई	देऽ	होऽ	ऽऽ
रे-	सा-	सा-	सासा	रे-म	मग	गरे	रेसा
होऽ	बाल	मांऽ	नक	पैह्न	दीतां	डिग	दाऽ
सारे	रेनी	सा-	रेसा	सा-	धसा	रेम	म-
नूऽ	ऽर	होऽ	वाल	मांऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

दिव्य नूर प्रकट करने में समर्थ पाकर गौरवान्वित हो रही है ...। गीतों में आभूषणों के प्रति चाह प्रकट हुई है। अन्ततः यह भी प्रिया का समर्पण भाव ही है। वह प्रिय को आकर्षित करने हेतु ही सुन्दर दिखना चाहती है ...।

19. डुग्गी-डुग्गी बासी लगदी उदासी

डुग्गी-डुग्गी बासी, लगदी उदासी डोला, उच्चेयाँ बँगला पुआई दे
बँगला पुआई दे, मोरियाँ रखाई दे डोला, बिच-बिच सीसे जड़ाई दे

बंगला पुआई दे बाग लुआई दे डोला
बिच-बिच पींगा पुआई दे
अड़ियां पूरियां कराई दे
डुग्गी-डुग्गी बासी ....

बंगला पुआई दे खुह खुणवाई दे डोला
उपर चर्खी लुआई दे ...
अड़ियां पूरियां कराई दे
डुग्गी-डुग्गी बासी ....

बंगला पुआई दे गोली रखाई दे डोला
मिंजो पलगें बठाई दे
अड़ियां पूरियां कराई दे
डुग्गी-डुग्गी बासी ....

भावार्थ :– नए परिवेश में आई युवती पत्नी को पति का घर नहीं भाता। वह मनुहार करती है कि यह निवास स्थान गहराई में अर्थात घाटी में बना है। यहां रहते हुए उसे उदासी लगती है। किसी ऊंची सुहानी जगह बंगला बनवा दो। बंगले में झरोखे रखवा कर, बीच–बीच में कांच जड़वा दो। उसकी कल्पना को मानों पंख लग गए हैं ..... ऊंची जगह पर बंगला बनवा दो। सामने बाग लगा कर बीच में पींग (झूला) डलवा दो। मेरे प्रिय ! मेरी अड़ियां (ज़िद) पूरी कर दो। बंगले के साथ–साथ एक कुंआ भी खुनवा दो। जिसके ऊपर चर्खी लगी हो। यही नहीं, इस बंगले में मेरे आराम की भी पूरी सुविधा होनी चाहिए।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सा	सा	सा	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	डु	ग्गी	डु	ग्गी
नी̣	–	–	प̣	–	–	–	–	–	–	सा	नी̣	नी̣	नी̣
बा	ऽ	ऽ	सी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ल	ग	दी	उ
सा	नी̣	सा	रे	सा	सा	म	रे	–	–	रे	सा	सा	सा
दा	ऽ	ऽ	सी	ऽ	डो	ऽ	ला	ऽ	ऽ	उ	च्चे	याँ	ऽ
नी̣	नी̣	नी̣	नी̣	सा	सा	रे	म	रे	सा	सा	–	–	–
बँ	ग	ऽ	ला	ऽ	पु	ऽ	आ	ई	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

मेरे लिए एक गोली (सहायिका) भी रखवा दो और मुझे पलंग पर बिठा दो ....। मेरी इच्छाएं पूरी कर दो ...।" इस गीत में स्त्री अपनी अकांक्षाओं को अधिकारपूर्वक अभिव्यक्त कर रही है। जो उसके आत्मविश्वास तथा अस्तित्व बोध का परिचायक है।

20. गल्लां होई बीतियां

गुआड़ुऐं पछाड़ुऐं तूं कजो झांकदी, झांकां कजो मारदी
दो हत्थ बुटणे दे लायां फुलमू, गल्ला होई बीतियां
बूटणा लगान तेरियां सक्कियां भाभियां, तेरियां ताइयां–चाचियां
जिन्हां जो ब्याहे दा चॉं ओ रांझू, गल्ला होई बीतियां
मैं तां होया मजबूर फुलमू, तिज्जो ते दूर फुलमू
पंडतां कित्ता मेरा नास वो फुलमू, गल्लां होई बीतियां
जिन्ही ताँ बाह्मणे तेरा ब्याह रखेया, ओ ब्याह सोधेया
उसदी ना पाये परमेसर पूरी, गल्लां होई बीतियां
बाह्मणां दा दोष नी किछ भी फुलमू, ऐह तां कर्मा दा लिखेया
कर्मा दा लिखया नी मिटे फुलमू, गल्लां होई बीतियां
जाणदी प्रीतां करी दुख भोगणा, जानी दुख भोगणा
भुल्ली नी पांदी मैं प्रीत तेरी, गल्लां होई बीतियां
इक्की पासे राँझू ब्याहूणा चलेया, ब्याहूणा चलेया
दुये पासें फुलमू दी लाश चली, गल्लां होई बीतियां
ठप्पा–ठप्पा कहारो मेरी पालकिया, मेरी पालकिया
फुलमू जो दाग मैं देणा लोको, गल्लां होई बीतियां
इक पासैं फुलमू जो दाग दित्ता लोको दाग दित्ता
दुए पासैं देई दित्ती छाल लोको गल्ला होई बीतियां

भावार्थ :– इस गीत का मूल संवेद्य है कि यदि मैं जानती, प्रेम करने से दुःख होगा तो कभी प्रीत न लगाती। प्रेम हर हृदय का सहज भाव है। परन्तु हर एक का प्रेम प्रतिफलित नहीं होता। बहुत बार दो प्रेमी एक नहीं हो पाते और विछोह उन्हें इतना व्याकुल कर देता है कि वे जी नहीं पाते .....। यह गीत भी दो प्रेम करने वालों की दुखान्त कहानी है। रचयिता इस कथा को कहते हुए इसे अतीत का प्रसंग कह रहा है। 'गल्ला होई बीतियां', वाक्य बार–बार दोहराया गया है अर्थात कही जा रही बातें हो चुकी है। प्रेमी जिसकी जबरन शादी की जा रही है वह (रांझू) अपनी प्रिया फुलमू को कहता है कि वह आगे–पीछे से झांक क्यों रही है। क्या देखना चाह रही है। आकर दो हाथ बुट्टणे (हल्दी–तेल व सुगन्धित द्रव्यों से तैयार सौन्दर्य प्रसाधन, विवाह अनुष्ठान का शुभारंभ) के क्यों नहीं लगती। नाराज प्रिया कहती है कि 'बुट्टणा', उसकी सगी भाभियां तथा ताई–चाचियां लगाएं, जिनके मन में चाव है। रांझू अपनी विवशता प्रकट करते हुए कहता है कि पंडित ने मेरा जीवन

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	सा	सा	ध़	–	–	धसा	–	सा	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	गु	ऽ	आ	ऽ	डु	ऐंऽ	ऽ	प	ऽ
रे	म	म	प	ध	ध	प	प	प	प	सांध	प	म	ग
छा	ऽ	डु	ऐं	ऽ	तूं	ऽ	क	जो	ऽ	झां	ऽ	क	ऽ
रे	–	–	रे	ध	ध	प	प	प	–	संध	प	म	ग
दी	ऽ	ऽ	झां	ऽ	कां	ऽ	क	जो	ऽ	मा	ऽ	र	ऽ
रे	–	–	रे	ग	रे	सा	साध़	–	–	ध़	सा	सा	–
दी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	दोऽ	ऽ	ऽ	ह	ऽ	त्थ	ऽ
रे	म	म	प	ध	ध	प	प	–	–	ध	प	म	ग
वु	ट	ऽ	णे	ऽ	दे	ऽ	ला	ऽ	ऽ	यां	ऽ	फु	ल
रे	–	–	रे	म	म–	–	प	थ	–	प	म	धप	म
मू	ऽ	ऽ	ग	ऽ	ल्लां	ऽ	हो	ई	ऽ	वी	ऽ	ऽऽ	ति
म	रेग	पम	गरे	सा	सा	सा	–	–	–	–	–	–	–
यां	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

बर्बाद किया। फुलमू गुस्से से भरी लग्न सोधने वाले पंडित के लिए अपशब्द कहती है कि उसका कभी पूरा न पड़े। प्रेमी समझता है कि ब्राह्मण का कोई दोष नहीं। यह हमारे कर्मों में लिखा था ...। जिसे मिटाया नहीं जा सकता। वह कहती है कि यदि में जानती कि प्रेम करके दु:ख मिलता है तो कभी प्रेम न करती। .... एक तरफ रांझू विवाह करने को चलता है और दूसरी ओर फुलमू की लाश महायात्रा के लिए, ले जाई जाती है। संस्कार के स्थल पर रांझू कहारों से अपनी पालकी धरती पर रखवाता है कि उसने फुलमू को दाग (अग्नि) देना है। एक ओर उसे अग्नि देता है और दूसरी ओर छलांग लगा कर वह प्राण दे देता है।

21. भागसुऐ दियां धारा

भागसुऐ दियां धारा ओ गद्दणी,
भेडां चारणा जाणा ओ
हंर तां जान्दे किल्ले किल्ले
सांगी सौगी जाणा ओ
पैरां दी मैं नंगी ओ द्योरा,
गोदिया बालक याणा ओ

पैरां जो मैं मोचणू लेई दिंह्गा,
बालक मैं ही खल्हाणा ओ
भागसुऐ दियां धारा ओ गद्दणी
भेडां चारणा जाणा ओ

भागसुऐ दियां धारा ओ गद्दणी,
घाये बडणा जाणा ओ
अंगे दी मैं नंगी बो द्योरा,
गोदिया बालक याणा ओ

अंगे जो मैं चोली लेई दिंह्गा,
बालक मैं ही खल्हाणा ओ
भागसुऐ दियां धारा ओ गद्दणी,
बाल्लण लैणा जाणा ओ

सिरे दी मैं नंगी ओ द्योरा,
गोदिया बालक याणा ओ
सिरे जो मैं तेरे सलुआ लेई दिंह्गा,
बालक मैं ही खल्हाणा ओ

भावार्थ :— कुछ लोक गीतों में भाभी के प्रति देवर के सहज आकर्षण का चित्रण हुआ है। इस गीत के केन्द्र में भी यही भाव है। देवर के अनुरोध पर कि भाभी उसके साथ भेड़े चराने के लिए चले, के उत्तर में भाभी उसे टालने के लिए बहाने बनाती है। सबसे बड़ा कारण गोदी में छोटे बच्चे के होने को जताती है। इस तरह वह अपने दायित्व बोध के ज़रिए मर्यादा बनाए रखने का सफल प्रयास करती है। देवर का आकर्षण भाव एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है। तो उस पर नियंत्रण की चेष्टा सामाजिक मूल्य है। गीत संवाद रूप में है। देवर कहता है – भागसू की धार (पहाड़) पर भेड़ें चराने के लिए साथ चलो। भाभी उत्तर देती है मेरे देवर, पांव में पहनने को मेरे पास कुछ नहीं है। दूसरा मेरी गोदी में छोटा बालक है।

देवर उत्साहित होकर कहता है कि वह पांव के लिए मोचणू (जूती) ले

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
--	--	--	--	रेऽ	रेम	रेसा	सासा
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	भाऽ	गसु	ऐऽ	दियां
रेम	मम	पध	ध-	धसां	पप	मरे	रेप
धाऽ	राओ	गद्य	णीऽ	ऽऽ	भेडां	चाऽ	रणा
प-	धप	म-	--	रेऽ	रेम	रेस	सासा
जाऽ	णाऽ	ओऽ	ऽऽ	होऽ	रतां	जाऽ	न्दे
रेम	मम	पध	ध-	धसां	पप	मरे	रेप
कि	ल्ले	कि	ल्ले	ऽऽ	सौगी	सौऽ	ऽगी
प-	धप	म-	--	--	--	--	--
जाऽ	णाऽ	ओऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

देगा तथा बालक को वही बहलाएगा। फिर कहता है भागसू (धर्मशाला के ऊपरी हिस्से में स्थित भागसूनाग नामक नाग मन्दिर जो पानी का प्राकृतिक स्त्रोत हैं। धर्मशाला नगर पहले भागसू नाम से भी जाना जाता था) की धार पर घास काटने को तुम मेरे साथ चलो। इस पर भाभी फिर बहाना बनाती है कि वह अंग से नंगी है। यानी उसके पास वस्त्र नहीं है। छोटा बच्चा भी देखना है। देवर उसके लिए चोली लेकर देने की बात कहता है तथा बच्चे की ज़िम्मेदारी भी लेता है। अन्तिम अन्तरे में देवर धार से बाल्लण (चूल्हे में जलाने योग्य लकड़ी) लाने के लिए साथ चलने का आग्रह करता है। भाभी कहती है कि सिर के लिए उसके पास कुछ भी ओढ़ने को नहीं है तथा छोटा बच्चा उसे संभालना है। देवर सिर के लिए सालू (ओढ़नी) लाने तथा बच्चे की संभाल का आश्वासन देता है। गीत मनुहार तथा नकार का मनोरंजक क्रम है।

22. पल भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे

पल भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे
छिन्न भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे
इस वो बरोटू दी छावाँ-छावाँ
पल भर बेई लैणा .....

हरिपुर नूरपुर ठण्डियाँ न छावां
बिच वो बलोचां दा ठाणा-ठाणा
पल भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे

छलियाँ दी रोटी कने सरूआँ दा साग
एई वो बलोचां दा खाणा-खाणा
पल भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे

पल भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे
छिन्न भर बेई लैणा बेई लैणा हो जिन्दे .....

भावार्थ :— कांगड़ा अंचल के गीतों में विविध बोलियों व भाषाओं का प्रभाव देखा जा सकता है। ठीक इसी तरह विविध जाति तथा धार्मिक समुदायों का ज़िक्र भी अक्सर मिल जाता है। बलोच (बलोचीस्तान से सम्बन्ध मुस्लिम) शब्द का प्रयोग बहुधा हुआ है। प्रशासनिक तथा बन्दोस्त (राजस्व) विभागों में ये कर्मचारी या अधिकारी रूप में तैनात रहते हैं। प्रेम का आकर्षण व जादू, जाति–धर्म का भेद कब मानता है। यहां इस गीत में थाने में कार्यरत युवा पुरूष की प्रेम फरियाद है कि तुम पल भर हमारे साथ बैठ लो। इस वरोटू (वृक्ष) की छाया तले, साथ समय बिता लो। हरिपुर तथा नूरपुर में पेड़ ही पेड़ हैं अतः ठण्डी छांव है। बीचों–बीच बलोचों का थाना है। छल्ली (मकई) की रोटी तथा सरसों का साग उनका खाना है ... इस खाने का निमन्त्रण देते हुए, पास से गुज़रती युवती से बैठने का सस्नेह आग्रह इस गीत में है ...।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सा	ध	प	ध
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	प	ल	भ	र
(प)म	–	म	रे	सा	ग	रे	(सा)ध़	–	–	सा	–	रे	–
बे	ई	ऽ	लैं	ऽ	णा	ऽ	बे	ई	ऽ	लैं	ऽ	णा	ऽ
म	–	–	प	म	प	म	ग	रे	–	सा	ध	प	ध
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जिं	दे	ऽ	ऽ	छि	न्न	भ	र
प	–	म	रे	सा	ग	रे	(सा)ध़	–	–	सा	–	रे	–
बे	ई	ऽ	लैं	ऽ	णा	ऽ	बे	ऽ	ई	लैं	ऽ	णा	ऽ
सां	–	–	ध	नि̲	सा	नि̲	ध	प	म	ध	प	ध	ध
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	जिं	दे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सां	सां	–	सां	–	–	सां	नि	(रे)सा	–	नि	ध	ध	प
इ	स	ऽ	वो	ऽ	ऽ	व	रो	ऽ	ऽ	टू	ऽ	री	ऽ
प	–	–	ध..	प	म	ग	रे	–	–	सा	ध	प	ध
छाँ	ऽ	ऽ	वां	ऽ	छाँ	ऽ	वां	ऽ	ऽ	प	ल	भ	र
अन्तरा													
म	म	ग	रे	सा	रे	–	म	म	–	म	–	प	–
ह	रि	ऽ	पु	ऽ	र	ऽ	नू	र	ऽ	पु	ऽ	र	ऽ
ध	ध	–	रे	सां	रे	सां	ध	प	ध	(म)प	–	प	भ
ठ	ण्डि	ऽ	याँ	ऽ	ऽ	न	छाँ	ऽ	ऽ	वां	ऽ	ऽ	ऽ
सां	सां	–	सां	–	–	सां	ध	रे	सा	सां	ध	ध	प
बि	च	ऽ	वो	ऽ	ऽ	ब	लो	ऽ	ऽ	चाँ	ऽ	दा	ऽ
प	–	–	ध	प	म	ग	रे	–	–	सा	ध	प	ध
ठा	ऽ	ऽ	णा	ऽ	ठा	ऽ	णा	ऽ	ऽ	प	ल	भ	र

प्रस्तुत गीत में स्थाई और अन्तरा है। अगले अन्तरों की पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

23. माए नी मेरिए जम्मुएं दे राहे

माए नी मेरिए जम्मुएं दे राहे
चम्बा है कितणी की दूर
हाय ! चम्बा है कितणी की दूर

शिमले नी बसणा सपाटुए नी बसणा
बसी लैणा चम्बे जरूर
हाय ! बसी लैणा चम्बे जरूर

उच्चीं उच्चीं रिढियाँ डुगी डुगी नदियाँ
मन मेरा होई जाँदा चूर
हाय ! मन मेरा होई जाँदा चूर

उड़ी जायां कागा मेरा लेई जा सुन्हेड़ा
सजणा नै मिलणा जरूर
हाय ! सजणा नैं मिलणा जरूर

माए नी मेरिए जम्मुएं दे राहे
चम्बा है कितणी की दूर
हाय ! चम्बा है कितणी की दूर

भावार्थ :– बहुत लोकप्रिय यह गीत, लगभग पूरे हिमाचल के लोक गायकों ने गाया है। इस गीत में चम्बा घाटी के प्रति आकर्षण व सम्मोहन का वर्णन है। गीत बड़े व्यवहारिक प्रश्न से आरम्भ होता है – मेरी मां जम्मू के रास्ते से होकर चम्बा कितनी दूर पड़ता है। अपनी चाह प्रकट करते हुए कहा है कि मुझे न तो शिमला बसना है न ही सपाटू। परन्तु चम्बा बस जाने की इच्छा है। यहां तो ऊंचे–ऊंचे पर्वत तथा गहरी–गहरी घाटियां हैं। मन थकान से चूर हो जाता है। फिर चम्बा में रहते अपने सजन से मिलने के लिए, कागा के माध्यम से सन्देश भेजने का अनुरोध है। ... कागा ! उड़ जा और मेरा सन्देश ले जा। मैंने अपने प्रिय से अवश्य मिलना है ...। गीत में चम्बा के प्रति लगाव के साथ–साथ श्रृंगार–रस के वियोग पक्ष का भी चित्रण है।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
सा	ध़	–	सा	–	–	सा	रे	म	प	प	ध	ध	प
मा	ऽ	ऽ	ए	ऽ	ऽ	नी	मे	रि	ऽ	ये	ऽ	ऽ	ऽ
प	प	–	प	–	(सां)ध	प	म	–	ग	रे	ग	रे	सा
ज	मु	ऽ	आं	ऽ	ऽ	दे	रा	ऽ	ऽ	हे	ऽ	ऽ	ऽ
सा	ध़	–	सा	–	सा	–	रे	म	–	प	ध	प	म
च	म्	ऽ	बा	ऽ	है	ऽ	कि	त	ऽ	णि	ऽ	ऽ	की
म	–	–	–	–	(प)ग	–	ग	रे	–	रे	ग	रे	सा
दू	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र	ऽ	हा	य	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

अन्तरा

सां	सां	–	सां	–	–	सां	सां	नि	(रें)सां	नि	ध	ध	प
शि	म	ऽ	ले	ऽ	ऽ	नि	ब	स	ऽऽ	णा	ऽ	स	ऽ
प	प	–	ध	ध	प	म	म	म(ग)	म	रे	ग	रे	सा
पा	टु	–	ए	ऽ	नी	ऽ	ब	स	ऽ	णा	ऽ	ऽ	ऽ
सा	ध़	–	ध़	सा	सा	–	रे	म	–	प	ध	प	म
ब	सी	ऽ	लैं	ऽ	णा	ऽ	च	म्	ऽ	बे	ऽ	ऽ	ज
म	–	–	–	–	(म)प	ग	ग	रे	–	रे	ग	रे	सा
रू	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र	ऽ	हा	य	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई और अन्तरा है। अगले अन्तरों की पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

24. बे चुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया

े चुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया
ओ रौइया पाणिए जो गेई वे हाँ
राऐं-राऐं जाँदेया राहिया घड़े जो बाल लगाई जायाँ
घड़े जो बाल लगाई जायाँ
चुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया ...
के बाल मैं कियां लगां गोरिए कि तू तां नार पराई वे
ू तां नार पराई वे हाँ
ुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया ...
कि मैं नईयो नार पराई द्योरा कि मैं तेरी बड्डी भरजाई वे
मैं तेरी बड्डी भरजाई वे हाँ
चुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया ...
ुआलिया चड़दिया द्योरा कि मुंहे पर लाली छाई वे हाँ
के मुंहे पर लाली छाई वे हाँ
ुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया ...
के लालिया चढ़न दे भाबो कि तू मेरी बड्डी भरजाई वे हाँ
कि तू मेरी बड्डी भरजाई वे हाँ
चुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया ...
ुकेआ कुम्भ घड़ा गोरिया
ओ रौइया पाणिए जो गई वे हाँ

ावार्थ :— लोकगीतों में नाटकीय स्थितियों का बहुत वर्णन मिलता है। ेवर–भाभी या पति–पत्नी कहीं, कभी भी अचानक दो अजनबियों की तरह मेल जाते हैं। स्नेह सूत्र उन्हें उनके वास्तविक सम्बन्ध तक पहुंचा देते हैं . . । इस गीत में गोरी अर्थात सुन्दर स्त्री कुम्भाकार घड़ा उठा कर रावी नदी क पानी लेने जाती है। भरा हुआ घड़ा सिर पर रखने के लिए किसी के हाथ े सहारे की जरूरत महसूस करती है। राह चलते एक राही से गुहार लगाती : – पथ पर जा रहे पथिक, मेरे घड़े को थोड़ा सहारा दो। वह अनजान स्त्री ा संकोच करता है। स्पष्टतया कह देता है कि मैं कैसे यह करूं, तुम पराई ्त्री हो। गोरी उसे पहचान लेती है। समझाती है मैं पराई स्त्री नहीं हूं, मैं ुम्हारी बड़ी भाभी हूं। चढ़ाई चढ़ते हुए उसके मुख पर पसीना आ जाता है। ुख–मंडल लाल–गुलाबी हो जाता है। युवा–देवर का साथ भी उसे उत्तेजित र रहा है। देवर से कहती है कि मेरे चेहरे पर लाली आ गई है ...। वह हज भाव से कहते हुए अपना मन्तव्य स्पष्ट कर देता है कि इस ओर ध्यान त दो। तुम मेरी सगी बड़ी भाभी हो ...। किशोर सुलभ आकर्षण–सम्मोहन भी एक तो कभी दूसरे के व्यवहार के गाम्भीर्य से मर्यादित हो जाते हैं।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
							मग
							बेऽ
रे-	रेग	मग	रेसा	--	सारे	रेग	म-
चुऽ	केऽ	याऽ	ऽऽ	ऽऽ	कुंऽ	भऽ	घऽ
म-	प-	ध-	सांध	प-	--	--	धसां
ड़ाऽ	ऽऽ	गोऽ	रिऽ	याऽ	ऽऽ	ऽऽ	ओऽ
ध-	-प	मग	गरे	--	रेम	म-	प-
रौऽ	ऽइ	याऽ	ऽऽ	ऽऽ	पाणि	एऽ	जोऽ
धप	ध-	ध-	पम	म-	--	--	मग
गेई	ऽऽ	वेऽ	ऽऽ	हाँ	ऽऽ	ऽऽ	केऽ
अन्तरा							
सां-	सां-	सां-	सां-	--	नि	सां	नि
राऽ	ऐंऽ	राऽ	ऐंऽ	ऽऽ	जाँ	ऽऽ	देऽ
ध	ध-	ध	नि-	सां-	सा-	--	सांनि
या	ऽऽ	राऽ	ईऽ	याऽ	हिऽ	ऽऽ	घऽ
निध	--	धप	म-	--	मप	प-	प-
ड़ेऽ	ऽऽ	जोऽ	ऽऽ	ऽऽ	बाऽ	लऽ	लऽ
धप	पध	ध-	पम	म-	--	--	मग
गाऽ	ईऽ	जाऽ	ऽऽ	याँ	ऽऽ	ऽऽ	केऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई और अन्तरा है। अगले अन्तरों की पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

25 सूलि़या टंगोई गेई जान

सूलि़या टंगोई गेई जान हाय राम
भली होई जाण पछाण हाय राम

उठदियाँ बौह्ंदिया निकल़दे हौके
भुली गेई घरा दे चुल्हे चौंकें
रैहून्दा नित तेरा ही ध्यान
हाए राम सूलि़या टंगोई गेई जान .....

भली होई राजे दी नौकरी सपाइया
भली चंगी फसी गई दुखे दीया फाइया
भुली गया लाण तां खाण
हाए राम सूलि़या टंगोई गेई जान .....

कागाँ उड़ांदी संदेसड़े मैं भेजां
बाज तेरे मिन्जो जानी रेसमी सेजां
दौड़ी–दौड़ी औंदिया न खाण
हाए राम सूलि़या टंगोई गेई जान
भली होई जाण पछाण हाय राम

भावार्थ :– इस गीत में विवाह के थोड़े ही समय बाद पति के नौकरी पर चले जाने से मन में उमड़ती विछोह की पीड़ा का मार्मिक वर्णन है। पत्नी कह रही है तुम्हारे जाने से अर्थात तुमसे बिछड़ कर जान, मानों सूली पर टंग गई है।

तुमसे अच्छी जान पहचान हुई। प्रणय सम्बन्ध बना और मैं इतनी–इतनी बेचैन हो रही हूं। उठते–बैठते हर पल ठण्डी सांसे भरती हूं। घर का चूल्हा–चौका सब बिसरा बैठी हूं। हर समय तुम्हारा ही ध्यान रहता है। तुम्हारी सौगन्ध मेरी जान सांसत में फंस गई है। मेरे सिपाही सजन, यहं राजा की नौकरी भली हुई जिसकी वजह से मैं दुख के फन्दे में जकड़ी गई हूं। खाना–पहनना सब भूल गई हूं। काग उड़ा–उड़ा कर संदेश भेजती हूं कि तुम्हारे बिना मेरी रेशमी सेज सूनी पड़ी है। प्रति–पल मुझे खाने को दौड़ती है। तुम्हारे बगैर घर के सुख–साधन मेरे लिए दु:ख का ही निमित्त बनते हैं।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
--	साध़	ध़सा	सा-	रेम	म-	-प	गरे
ऽऽ	सूऽ	लियाऽ	टंऽ	गोऽ	ईऽ	ऽगे	ऽई
रेम-	म-	--	-म	गप	मग	रेसा	रेसा
जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽन	हाय	ऽऽ	राऽ	ऽऽ
-साध़	साध़-	ध़सा	सा-	रेम	सा-	-प	-म
ऽम	सूऽ	लियाऽ	टंऽ	गोऽ	ईऽ	गेऽ	ऽई
रेम	म-	--	-म	धप	मप	प-ध	
जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽन	हाए	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
--	धध	ध-	ध-	धप	प-	ध-	सां
ऽऽ	भलि	होऽ	ऽई	जाऽ	ऽऽ	नऽ	पऽ
धप	प-	--	पम	गप	मग	रेसा	रेसा
छाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽण	हाय	ऽऽ	राऽ	ऽऽ
-साध़	साध़-						
ऽम	सूऽ						

अन्तरा

--	मम	धनि	--	सां-	--	सां-	रेंसां
ऽऽ	उठऽ	दियाँ	ऽऽ	बौऽ	हऽ	दिऽ	ऽऽ
नि-	निनि	नि-	सां-	निध	पध	ध-	निध
ऽऽ	निक	लऽ	देऽ	होऽ	ऽऽ	केऽ	ऽऽ
पम	मम	धनि	--	सां	--	सां	रेंसां
ऽऽ	भुली	गेई	ऽऽ	घरां	ऽऽ	देऽ	ऽऽ
नि-	नि-	नि-	सां-	निध	पध	ध-	निध
ऽऽ	चुऽ	लेऽ	ऽऽ	चौंऽ	ऽऽ	केऽ	ऽऽ
पम	निनि	निनि	निऽ	निरें	रें-	सां-	निध
ऽरैं	हन्दा	नित	तेऽ	राऽ	ऽऽ	हीऽ	धऽ
ध-	--	--	-ध	गप	मग	रेसा	रेसा
याऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽन	हाय	ऽऽ	राऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गा[illegible] जाएंगी।

26. कपड़ेयाँ धोआँ छम-छम रोआँ कुंजुआ

का ड़ेयाँ धोआँ छम-छम रोआँ कुंजुआ, टुटी बटणां दी जोड़ी ओ
हो बटणां दा गम मत करें चंचलो, चम्बे चाँदी भतेरा ओ
तूँ ताँ चलु ऐं परदेस कुंजुआ, मिंजो देई जा नसाणी ओ
ओ गोरी-गोरी बाई लाल चूड़ा चंचलो
बिच्च गजरा नसाणी हो, मेरिए जिन्दे बिच्च गजरा नसाणी हो
रात ी वो बराति मत औन्दा कुंजुआ, बैरी भरियाँ बन्दुकां ओ
मों ए जिन्दे बैरी भरिया बन्दुकां ओ, ओ बैरियां दा डर मत कर चंचलो
बाँ ई जोर भतेरा हो, मेरिये जिन्दे बाईं जोर भतेरा हो
ओ मिलणा ताँ तिज्जो मैं जरूर चंचलो, तेरी क्या वो नसाणी ओ
मेरिये जिन्दे तेरी क्या वो नसाणी ओ,
चम्बे दे चुगाने मेरा डेरा कुंजुआ
बूटा पिप्पल़ नसाणी हो, मेरिए जिन्दे बूटा पिप्पल़ नसाणी हो
दूर-दूर कजो मेत्ते रहंदा कुंजुआ, तेरे दिला बेईमानी ओ
मो ये जिन्दे तेरे दिला बेईमानी ओ, मैं तां दूर दिल तेरे पास चंचलो
ल ी प्रीत निभाणी ओ, मेरिये जिन्दे लगी प्रीत निभाणी हो
चम्बे लगा मिंजरा दा मेल़ा चंचलो
असां रल़ी मिल़ी दिक्खणा ओ
मेरिए जिन्दे असा रल़ी मिल़ी दिक्खणा हो

भ वार्थ :— यद्यपि यह चम्बा घाटी का बहुत कर्णप्रिय व प्रचलित गीत है। पर न्तु कांगड़ा में यह गीत इतना गाया व सुना गया है कि यह चम्बा—कांगड़ा क सांझा हो गया लगता है ... वैसे अब तो यह अन्तर कैसेट्स ने ख़त्म ही क दिया है। यह एक प्रेम गीत है। जिसमें वियोग पक्ष चित्रित हुआ है। कूंजू त ा चंचलों इसके नायक व नायिका हैं। कपड़े धोती चंचलो दुःखी होकर क ती है कि मैं छम—छम रो रही हूं। क्योंकि बटनों की जोड़ी, तुम्हारी नि शानी टूट गई ...। कूंजू समझाता है कि तू बटनों (चान्दी के) का दुःख म कर। चम्बा में बहुत चांदी है। अर्थात और बन जाएंगे। चंचलो कहती है वि तू तो परदेस जा रहा है। मुझे कोई निशानी दे कर जा। वह कहता है वि तेरी गोरी—गोरी बाहों में लाल चूड़ा है और बीच में गजरा मेरी निशानी है फिर वह आशंकित हो कर कहती है कि रात—बेरात मत आना (लौट आना नि श्चित कर रही है) दुश्मनों ने बन्दूकें भर रखी हैं ...। प्रिय समझाता है कि मि लने तो मैं ज़रूर आऊंगा तू बता तेरी पहचान क्या है ? वह कहती है कि

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
रे	रे	–	रे	ग	म	ग	रे	सा	–	सा	–	सा	–
क	प	ऽ	ड़े	ऽ	ऽ	याँ	धो	आँ	ऽ	छ	म	छ	म
रे	म	–	म	प	नि	ध	प	–	–	प	ध	ध	प
रो	आँ	ऽ	कुं	ऽ	जु	ऽ	आ	ऽ	ऽ	टु	ऽ	टी	ऽ
म	रे	–	म	–	म	–	प	ध	–	प	म	ध	प
ब	ट	ऽ	णां	ऽ	दी	ऽ	जो	ऽ	ऽ	ड़ी	ऽ	ऽ	ऽ
म	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
ओ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ				
अन्तरा													
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सां	ध-	निनि	सां-
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सां	सां	–	सां	–	–	सां	नि	रेंसा	–	नि	ध	ध	प
व	ट	ऽ	णा	ऽ	ऽ	दा	ग	म	ऽ	म	ऽ	त	ऽ
प	ध	–	प	म	ध	प	प	–	–	प	ध	ध	प
क	रें	ऽ	चं	ऽ	च	ऽ	लो	ऽ	ऽ	च	म्	बे	ऽ
म	रे	–	म	–	–	म	प	सां	ध	प	म	ध	प
चाँ	ऽ	ऽ	दी	ऽ	ऽ	भ	ते	ऽ	ऽ	रा	ऽ	ऽ	ऽ
म	–	–	म	–	म	–	ग	रे	–	रे	ग	रे	सा
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	हा	ए	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

चम्बा के चौगान (विस्तृत समतल मैदान – जहां मेले लगते हैं और संध्या समय लोग घूमते हैं) में मेरा डेरा है। पीपल का बूटा जहां है। अचानक उपालंभ देते कहती है कि तू दूर–दूर रहता है। तेरे मन में बेईमानी है। कूंजू प्यार से कहता है कि लगी प्रीत तो निभानी ही है। ... मिंजरों का मेला हम एक साथ देखेंगे ...। बिछुड़ता प्रियतम अपनी प्रिया को भरसक आश्वस्त कर रहा है।

27. हरिए डालि़ए तूं कियां बड्डणी

ह रिए डालि़ए तूं कियां बड्डणी, बड्डणे दा पाप लगदा
अक्खीं हेरी करि कियां छड्डणी, छड्डणी बजोग लगदा
ह रिए डालि़ए तूं कियां बड्डणी .....

दुध पी लेणा कौल्ले कने, असां तुसां रोज मिलणा
लोकां मरी जाणा हौल्ला कने, असां तुसां रोज मिलणा
हरिए डालि़ए तूं कियां बड्डणी .....

काले कुक्कड़े दी लाल कलगी इतणा प्रेम छोरिए
राति सुपने च मिलणा लगी इतणा प्रेम छोरिए
हरिए डालि़ए तूं कियां बड्डणी .....

चिटटे चौलां दियां तिन कणियां प्रीत नभाई दस्सणी
असां मिलि जाणा दोयां जणेयां प्रीत नभाई दस्सणी
हरिए डालि़ए तूं कियां बड्डणी .....

भावार्थ :— इस श्रृंगार गीत में प्रेम के संयोग पक्ष को अभिव्यक्ति मिली है। छोटी उम्र की प्रेमिका को सम्बोधित करते हुए प्रेमी कहता है कि तूं अभी कोमल हरी शाख की तरह है। जिसे काटने से अर्थात तुझे तेरे परिवेश से उखाड़ लेने में पाप बोध है। परन्तु आंखों से देख लेने के बाद, तेरे प्रेम से विमोहित होकर यदि मैं तुझे छोड़ जाता हूं तो वियोग की पीड़ा सहनी होगी ...। मन की भावनाओं को स्वर–साम्य की सहायता लेकर प्रकट किया गया है। "दूध पी लैणा कौल्ले कणैं / लोकां मरी जाणा हौल्लां कनैं। अर्थात हम प्रेम करेंगे। आनन्द मग्न रहेंगे और लोग जलन से दुखी होंगे। काले मुरगे की

स्वर लिपी :-

×			२				0			३		
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	ग	ग	ग
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ह	रि	ए
रे	रे	–	ग	–	रे	सा	सा	सा	–	रे	–	सा
डा	लि़	ऽ	ए	ऽ	तूं	ऽ	कि	यां	ऽ	ब	ऽ	ड्
ध़	प़	प़	नि़ध	प़	ग़	ग़	ग़	ग़	–	ग़	प़	प़
णी	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ब	ड	ऽ	णे	ऽ	दा
ध़	सा	सा	ग	रे	सा	ध़	सा	–	–	ग	ग	ग–
पा	प	ऽ	ल	ऽ	ग	ऽ	दा	ऽ	ऽ	अ	ऽ	क्खी
रे	रे	–	ग	–	रे	सा	सा	सा	–	रे	–	सा
हे	री	ऽ	क	ऽ	रि	ऽ	कि	यां	ऽ	छ	ऽ	ड
ध़	प़	प़	नि़	ध़	प़	ग़	ग़	ग़	–	ग़	प़	प़
णी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	छ	ड	ऽ	णी	ऽ	ऽ
ध़	सा	सा	ग	रे	सा	ध़	सा	–	–	–	–	–
जो	ऽ	ग	ल	ऽ	ग	ऽ	दा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगे।

लाल कलगी है। तू रात को सपने में मिलने लगी है। इतना प्रेम, ऐ लड़की कि तूं पल–पल साथ रहने लगी है। हमारा प्रेम गहरा है। इसमें इतनी ताकत है कि यह हमें मिला देगा। हम दोनें एक हो जाएंगे। गीत, प्रेम की अभिव्यक्ति तो है ही। इस प्रेम पर अटूट विश्वास का वर्णन भी इसमें है ...। यदि प्रेम है तो कोई बाधा नहीं ...। छोटी वय भी दो प्रेमियों को मिलने में अवरोध नहीं बनेगी ...।

28. उच्चिया रिड़िया मैं बंगला पुआनीआं

उच्चिया रिड़िया मैं बंगला पुआनीआं, जी बंगला पुआनीआं
लमियाँ रखानी गज कात्ति, लमियाँ रखानी गज कात्ति बैरिया ओ
लमियां रखानी गज कात्ति,

उच्चियां रिड़िया कुआँ दवानीआं जी कुआ दवानीआं
लमियाँ रखानी मैं लज्जणा, लमियाँ रखानी मैं लज्जणा बैरिया हो
लमियां रखानी मैं लज्जणा

उच्चिया रिड़िया मैं खाणा बणानी आं जी खाणा बणानीआं
बामण लांदी मैं रसोइया, बामण लांदी मैं रसोइया बैरिया हो
बामण लांदी मैं रसोइया

उच्चिया रिड़िया में पलंग डुआनीआं, जी पलंग डुआनीआं
ओडण दिन्नीआं रजाइयां, ओडन दिन्नीआं रजाइया बैरिया ओ
ओडन दिन्नीआं रजाइयां

उच्चिया रिड़िया मैं बंगला पुआनीआं, जी बंगला पुआनीआं
लमियाँ रखानी गज कात्ति, लमियाँ रखानी गज कात्ति बैरिया ओ
लमियां रखानी गज कात्ति,

भावार्थ :— कुछ गीतों में बात बहुत ही सांकेतिक ढंग से कहने का प्रयास है ...। अभिप्राय ढूंढने से, कुछ पकड़ में नहीं आता। शब्द की लाक्षणिक व व्यांग्यात्म सामर्थय ही अर्थ खोलती है ... इस गीत में ऊंची पहाड़ी पर बंगला बनवाने की बात करती स्त्री कहती है कि उसने गज व कात्ति (छत बनाने को लकड़ी की कैंची) बहुत लम्बे आकार की बनवाई है। कुआं खुदवाया है तो चर्खी की रस्सियां भी लम्बी–लम्बी रखवाई हैं। अर्थात बताना चाहती है कि बहुत बड़ा घर बनवा रही है। लम्बी रस्सी से अभिप्राय है कि कितनी भी गहराई में पानी हो, निकाला जा सकेगा ...। सूखी ऋतुओं की ओर भी संकेत है। घर ऊंचाई पर है और सब कुछ ऊंचा ही ऊंचा है। रसोई (खाना) बनवाने के लिए रसोइया लगवाऊंगी। पलंग डलवाती हूं तो ओढ़ने के लिए रजाई (लेहाफ) रखवाती हूं। निहितार्थ यह है कि सुन्दर बंगला है, कुंए का ठण्डा पानी, स्वादिष्ट खाना पकाने के लिए महाराज हैं और गर्म–सुखद बिस्तर है

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	–	सा	सा–	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	उ	च्चिऽ	या
म–	––	ग	ग	–	म–	प	मप
रिऽ	ड़िया	मैं	ऽ	ऽ	बंग	ला	पुऽ
नि	प	म	ग	–	गम	म्	–
आ	नि	आं	जी	ऽ	बंग	ला	पु
नि	प	म	ग	–	म–	–	–
आ	नि	यां	ऽ	ऽ	लमि	यां	र
प	नि	प	म–	म	–	–	–
खा	नी	ऽ	गज	का	ऽ	ऽ	ऽ
ग	रे	ग	रे	सा	सा–	सा	सा
ति	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	लमि	यां	र
म–	–	ग	ग–	–	म	प	मप
खाऽ	नी	ऽ	गज	का	त्ति	वै	रिऽ
पि	प	म	ग	–	मम	–	–
या	ऽ	ओ	ऽ	ऽ	लमि	या	र
प	निंप	प	म–	म	–	–	–
खा	नी	ऽ	गज	का	ऽ	ऽ	ऽ
ग	रे	ग	रे	सा	सा	सा–	सा
त्ति	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	उ	चिऽ	या

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

...। यह मानो अपने प्रिय को निमंत्रण है। उसे अपने बड़प्पन व अभिजात्य द्वारा आकर्षित करने का प्रयास है।

29. उआरे घर मेरा

उआरे घर मेरा पार तेरा ओ
ओ बिच नदिया बगुरी तेरी सौं
ओ बिच नदिया बगुरी तेरी सौं
उआरे घर मेरा पार तेरा हो

अद्धि रोटी छाई दा कटोरा ओ
अद्धि रोटी छाई दा कटोरा ओ
ओ मियाँ खाई लै नुहारी तेरी सौं
ओ मियाँ खाई लै नुहारी तेरी सौ
उआरे घर मेरा पार तेरा हो

मियाँ मेरा पत्तणे दा तारू ओ
मियाँ मेरा पत्तणे दा तारू ओ
मियाँ रूड़ि मत जान्दा तेरी सौं
ओ मियाँ रूड़ि मत जान्दा तेरी सौं
उआरे घर मेरा पार तेरा हो

भावार्थ :— कांगड़ा के लोक गीतों में विवाह बाद के सम्बन्धों तथा अन्य जाति की स्त्रियों से प्रेम सम्बन्ध का वर्णन भी अक्सर मिलता है। जो इस सच को दर्शाता है कि प्रेम जाति व धर्म के बन्धनों से ऊपर होता है। समाज व बिरादरी की मर्यादा से भी परे होता है। इस गीत में नदी के इस ओर प्रेमिका है तो नदी के पार उसका प्रियतम मियां (राजपूत) है। दोनों के घरों के बीच नदिया बहती है ... इसके कई अर्थ हैं; कि दोनों के बीच बाधा है। या दोनों जीवन के दो छोर हैं ...। परन्तु प्यार कहां किसी बाधा या नियति को मानता है। सामान्य सी ज़िन्दगी है प्रिया की। वह प्रिय से अनुरोध कर रही है कि आधी रोटी है और दही की एक कटोरी भर है। तुम नुहारी (सुबह का नाश्ता)

स्वर लिपी :-

×			0		
प़प़ग	ऩी–सा	ग–रे	ऩी–सा	रे–म	ग–रे
उआरे	घऽर	मेऽरा	पाऽर	तेऽरा	ओऽऽ
सा––	गम–	प–प	–प–	म––	गरे–
ऽऽऽ	बिचऽ	नदिया	ऽबऽ	गुऽऽ	रीऽऽ
–––	मगरे	सौं––	गम–	पप–	–प–
ऽऽते	ऽरीऽ	सोऽऽ	बिचऽ	नदिया	ऽबऽ
म––	गरे–	–––	मगरे	सा––	–––
गुऽऽ	रीऽऽ	ऽऽऽ	ऽतेरी	सौंऽऽ	ऽऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

करके ज़ाओ ... सुबह–सुबह भेज रही है जिसका अर्थ है कि रात वह उसके यहीं था ...। एक मधुर सा लुकाव–छिपाव है। फिर वह कहती है कि मियां मेरा पत्तण (जिस जगह से नदी या दरिया पार किया जाता है) का तैराक है ... फिर शंकित भी हो जाती है कि कहीं रूड़ (बह) मत जाना ...। प्रेम में भय रहता ही है ...।

30. मेरिये जोबणु नणाने

मेरिये जोबणु नणाने
मंज्जा बोड़ीडां की उआने
अज मेरे बाबु ईणा हो
जानि मेरिये हो अज मेरे बाबु ईणा ओ . . . .

घड़ी-घड़ी ओबरि जो जांदी
घड़ी-घड़ी धूपडू धुखांदी
अज मेरे बाबु इणा हो
जानि मेरिये हो अज मेरे बाबु ईणा ओ . . . .

बाबु रिड़केया चम्बे दिया हाटा
असा हेरया तमासा
अज मेरे बाबु ईणा हो
जानि मेरिये हो अज मेरे बाबु ईणा ओ . . . .

भावार्थ :– श्रृंगार रस प्रधान इस गीत में वियोग में संयोग की संभावना ने अद्भुत रस पैदा किया है। जिसमें डूबी पत्नी उत्तेजित अभिसारिका बनी हुई है। बाबू अर्थात पति के आने की सूचना पाकर अत्यन्त आनन्दित तथा उमंग से भरी वह अपनी प्रसन्नता, ननद से सांझा कर रही है। उसकी यह खुशी बता रही है कि बिछोह उसके लिए कितना पीड़ादायक रहा होगा। वह कहती है, "मेरी हम उम्र ननद, मंज्जा (चारपाई) बौड़ी अर्थात कोठे पर लगाऊं या उआन (मुख्य–कक्ष) में लगाऊं। आज मेरे बाबू ने आना है।" फिर विभोर होकर कहती है कि मेरी जान ! आज मेरे प्रियतम आएंगे। वह घड़ी–घड़ी ओवरी

स्वर लिपी :-

×			0		
---	---	---	---	---	धसा-
ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ	मेरिये
रे--	-रे-	गप-	गरे-	सा--	-ध-
जोऽऽ	ऽबऽ	णुऽऽ	नऽऽ	णाऽऽ	ऽनेऽ
---	धसा-	रे--	रे--	ग--	पगरे
ऽऽऽ	मंझाऽ	बोऽऽ	ड़िऽऽ	याऽऽ	किऽउ
सा--	ध--	ध-रे	रे-रे	सा--	-ध-
याऽऽ	नेऽऽ	अज्ज	मेऽरे	बाऽऽ	ऽबुऽ
रे--	सा--	सा--	---	---	पप-
ईऽऽ	णाऽऽ	एऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ	जानिऽ
---	---	---	ध--	ध--	ध--
मेऽऽ	रिऽऽ	येऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ	ऽऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

(भीतरी कक्ष) में जाती है। जहां देवता के सन्मुख बार–बार धूप धुखाती है। अर्थात प्रार्थना रत्त है कि प्रिय शीघ्र तथा सकुशल पहुंचे। वह पुरानी स्मृतियों में खो जाती है ... एक बार मेरा बाबू चम्बा के हाट–बाज़ार में फिसल गया था। हमने उसके रिड़कने (गिरने) का तमाशा देखा था। मेरी सहेली जैसी प्रिय ननद, आज मेरे पति घर आएंगे ...। मेरी जान आज मेरे बाबू आएंगे।

31. अलबेलुआ हो दगेबाजुआ हो

अलबेलुआ हो दगेबाजुआ हो
धारा पर खड़ी गोरी खिड़-खिड़ हसदी
राजा बुझे राणी आई भला हो कि भला हो हो हो हो
अलबेलुआ हो ......

अपणी ग्लांदी मेरी गल नईयों सुणदी
मैं जो केहा राणी रोई भला हो कि भला हो हो हो हो
अलबेलुआ हो ......

बडी वो बुरी तेरे राजे दी नौकरी
इक बारी छन्दे-छन्दे आई जायाँ हो कि भला हो हो हो हो
अलबेलुआ हो ......

नीली घोड़ी लौगिंया तेरा साफा ओ
राणी बुझे राजा आया भला हो कि भला हो हो हो हो
अलबेलुआ हो ......

भावार्थ :— बहुत सारे लोकगीतों में अतिकल्पना अर्थात फैंटेसी का प्रयोग हुआ है। इस गीत में भी ऐसा है। प्रियतम व प्रिया रूपी राजा तथा रानी के बीच संवादों के ज़रिए गीत विकसित हुआ है। वर्णनात्मक शैली में। दोनों ही ओर से प्रिय को अलबेला व दगाबाज कह कर सम्बोधित किया गया है। पहाड़ पर खड़ी रानी खिड़–खिड (खिलखिला कर) हंस रही है। उसकी हंसी का स्वर सुनते राजा को अन्देशा होता है कि वह उससे मिलने आ रही है। परन्तु वहआती नहीं इसी से उसे धोखेबाज कहा जा रहा है। राजा को शिकायत है कि रानी उसकी बात नहीं सुनती। यह कहने पर वह रो पड़ती है। उसे राज़ा (यहां राजा वास्तविक राजा है) की नौकरी बहुत बुरी लगती है। इसी की वजह से उसका सजन उससे दूर हो जात है। वह मिन्नत–मनूहार करती है कि सजन लौट आए। .... नीली घोड़ी पर कलेजी रंग का साफ़ा (पगड़ी) पहने एक सवार आता दिखता है। रानी सोचती है कि उसका प्रिय राजा लौट कर आ रहा है। ... यह गीत स्वप्न देखने तथा इसे देखते–देखते ही इसके टूटने का आभास देता, मिलन व बिछोह का अद्‌भुत सामंजस्य है।

स्वर लिपी :-

×			0		
--	--	--	--	--	सासा-
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	अल
मम	म-	ध-	मम	गम	गसा
वेलु	आऽ	होऽ	दगे	बाजु	आऽ
सा-	सासा	सांसां	सां-	नी-	नीनी
होऽ	अल	बेलु	आऽ	होऽ	दगे
धनी	नी-	धम	सासा	मम	म-
बाजु	आऽ	होऽ	अल	बेलु	आऽ
ध-	म-	ध-	म-	गम	धनी
होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	धारा	पर
सांसां	नीध	--	धमगसा	मम	म-
खड़ी	गोरी	ऽऽ	खिड़खिड़	हस	दीऽ
गम	मध	धसां	नीध	मम	गसा
राऽ	जाबु	झेऽ	राणी	आई	भला
मम	ध-	म-	--	--	--
होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

32. डोला सब फुल्ल फुल्ले

डोला सब फुल्ल फुल्ले, फुल्ले माली बाग सिम्बले़ दे फुल्ल कैं नी फुल्लदे
गोरिए सिम्बले़ दे फुल्ल रूइया दे तार नी चढ़दे देओ नी देवते
पिया न कुथी छट्टियां न पंजाप मंदल़ कुस घर बज्जेया
गोरिए राजे दी नगरी बसी घणी सार क्या जाणा कुस घर बज्जेया ....
डोला औंदियां नारां गांदियां गीत नां सैह् तुआडड़ा लैंदियां
गोरिए कूंजां दियां डारा उड़ी उड़ी औन इस उस घर आई बैंदियां ....
डोला पलक होया दिन होया परगास नाई द्रवां लेई आया
अजी कुसदा तूं नाई कुसदा परोह्त कुसदैं द्रुवां लेई आया
अजी तेरा मैं नाई तेरा पुरोह्त तेरैं द्रुवां लेई आया
डोला कड्ड कटार देई देणी जान बालक मिंजो ते लुकाया
गोरिए चल चलिए असां हाट बजार बाल मुल्लैं लेई ओइए
डोला मुल्ले दे बालक गैर गुआर सपूत सरीरे दा उमगेया ....
गोरए तूं मेरी नार सैह् चतर सुजान बालक तेरिया गोदिया
डोला नाई पुरोह्त मंगदे न लाग खोल दमा दियां बोरियां .....

भावार्थ :– यद्यपि यह गीत जन्मोत्सव के अवसर पर गाया जाता है। परन्तु इसमें उस नारी की व्यथा शब्दबद्ध हुई है जो मां नहीं बन पाती। प्रतीकात्मक रूप से गीत, पति–पत्नी के बीच संवादों के जरिए शुरू होता है। पत्नी – प्रिय! सब फूल और मालियों के बाग खिल गए। ये सिम्बल के फूल क्यूं नहीं खिले ?" पति – गोरी (प्रिया) सिम्बल के फूल रूई की तार समान होते हैं। ये नश्वर फूल देवी और देवता पर नहीं चढ़ते। मालती का सफेद वर्णी फूल ही देवी–देवता पर चढ़ता है। पत्नी कहती है कि किसी घर में छटी या पंजाप (जन्म सम्बन्धी शुद्धि व पूजा अनुष्ठान) नहीं है। फिर शुभ संकेतक वादन (मंदल) कहां बज रहा है। पति अनासक्त भाव से कहता है कि राजा की नगरी अत्यन्त घणी बसी है। क्या जानू कहां से यह ध्वनी आ रही है ? पत्नी व्याकुल सी पूछती है – प्रिय ! नारियां गीत गाती हुई आ रही है और आप का ही नाम ले रही हैं।" पति फिर टाल देता है यह कह कर कि ये तो पंछियों के डार (समूह) के समान हैं। इस या उस घर उड़ उड़ कर आ बैठती हैं। सुबह हो गई। पुरोहित व नाई बधाई स्वरूप हरी दूब लेकर आए हैं। वह उन्हीं से पूछती है – तुम किसके नाई तथा किस कुल के पुरोहित हो और किसके लिए बधाई लेकर आए हो ?" वे उत्तर में कह देते हैं कि वे उन्हीं के कुल के नाई व पुरोहित हैं और उन्हीं के लिए शुभ की प्रतीक दूव लेकर आए हैं।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सा	–	रे	म
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	डो	ऽ	ला	ऽ
म	म	–	प	–	रे	–	सा	–	–	ध़	–	सा	–
स	ब	ऽ	फु	ऽ	ल्ल	ऽ	फु	ऽ	ऽ	ल्ले	ऽ	फु	ऽ
रे	म	–	रे	–	म	–	प	–	–	–	–	–	ध
ल्ले	ऽ	ऽ	मा	ऽ	ली	ऽ	बा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ग
ध	प	–	म	ग	रे	–	सा	–	–	रे	–	म	–
सिं	ब	ऽ	ले	ऽ	दे	ऽ	फु	ऽ	ऽ	ल	ऽ	कैं	ऽ
म	–	–	प	–	रे	–	सा	–	–	–	–	–	–
नी	ऽ	ऽ	फु	ऽ	ल्ल	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

वह सब समझ जाती है। अत्यन्त दुःखी होकर कहती है कि कटार निकालो वह जान दे देगी। क्योंकि पुत्र जन्म की ख़बर उससे छिपाई गई है। पति कहता है कि ठीक है यदि उसे नाराज़गी है तो वे हाट बाजार जाकर बालक मोल खरीद लाऐंगे। पत्नी हार जाती है। जब उसके पति का पुत्र चाहे किसी भी स्त्री के गर्भ में पला हो, है तो खरीद कर बच्चा लाने की संगति नहीं बैठती। वह कहती है कि खरीदे हुए बच्चे कुपुत्र होते हैं। सपूत तो अपना ही पुत्र होगा .....। उसे बहुत बुद्धिमान कहते हुए पति बच्चे को उसकी गोदी में दे देता है। वह प्रसन्न कहती है – नाई तथा पुरोहित बधाई मांग रहे हैं। पैसों की बोरी का मुंह खोल दो...। यदि कोई स्त्री मां नहीं बन पाती तो पति को दूसरी पत्नी लाने या दूसरी औरत से सम्बन्ध बना कर सन्तान पाने का अधिकार है। ऐसी स्थिति में पहली पत्नी को सहर्ष शिशु जन्मोत्सव में शामिल होना है ......। गीत स्त्री मन की पीड़ा को खंगालता है फिर बड़ी सफाई से उसे छिपा लेने के कौशल पर समाप्त हो जाता है।

33. बरखा री छम-छम

बरखा री छमछम मिंजो तां डरांदी
धारा री छुई मुई डसणे जो औंदी
मैं नीं रैहूणा किलिया मिंजो लेई चल सौगी हो .....

घा कियां बड्डा मिन्जो कीडू कण्डू डसदे
पाणिए जो जाणा मेरेयां पैरा कण्डे चुभदे
जाणा मैं तां तेरे संग मेरे मन मौजी हो ......

धारा रे ग्वालु मुए मिंजो दिक्खी हसदे
सरीका तां सारे मिंजो छल़ी-छल़ी पुच्छदे
ग्लांदे सब नौकर तेरा होई गेया जोगी हो .....

भावार्थ :– कांगड़ा के लोक गीतों में परोक्ष रूप से पहाड़ी जीवन की कठिन दिनचर्या का वर्णन हुआ है। युवती पत्नी को यह इसलिए और भी ज्यादा असहनीय प्रतीत होता है। क्योंकि उसका पति उससे दूर परदेस में (रोज़ी–रोटी के लिए) है। वह प्रिय को सम्बोधित है – वर्षा की छम–छम से मुझे भय लगता है। धारा अर्थात पहाड़ की बूटी अपने आकार–प्रकार से मानों मुझे डसने को आती है। मैं अकेले नहीं रहना चाहती। मुझे अपने साथ ले चलो।" उसे घर के काम–काज भी मुश्किल लगते हैं – मैं घास कैसे काटूं ? घास में छुपे कीड़ों के डसने की चिन्ता सताती है। पानी लेने को जाती हूं तो पांव में कांटे चुभते हैं। मेरे मन–मौजी अर्थात मस्त तबीयत के प्रिय मुझे साथ ले चलो।" वह हर संभव कोशिश से पति को मना लेना चाहती है। कहती है कि वह घास काटने को जाती है तो पशु चराने आए ग्वाले उसे देख–देख कर हंसते यानी उसे छेड़ते हैं। शरीक (बिरादरी के लोग) छल और बहाने से उसका भेद लेना चाहते हैं। वे कहते हैं कि उसका नौकर (पति) जोगी हो गया है। अब घर नहीं लौटेगा ....।" इस गीत में कमाने के लिए घर छोड़ कर बाहर जाने की व्यथा भी है।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
सा	सा	–	ध	–	ध	–	प	प	–	ध	–	ध	–
ब	र	ऽ	खा	ऽ	री	ऽ	छ	म	ऽ	छ	ऽ	म	ऽ
प	प	–	प	–	–	ध	म	–	ग	म	–	रे	–
मिं	जो	ऽ	तां	ऽ	ऽ	ड	रां	ऽ	ऽ	दी	ऽ	ऽ	ऽ
रे	–	–	ध	–	ध	–	प	प	–	ध	–	ध	–
धा	ऽ	ऽ	रा	ऽ	री	ऽ	छु	ई	ऽ	मु	ऽ	ई	ऽ
प	प	–	प	–	–	ध	म	–	ग	म	–	रे	–
ड	स	ऽ	णे	ऽ	ऽ	जो	औं	ऽ	ऽ	दी	–	ऽ	ऽ
ध	सां	–	नी	ध	प	म	म	प	म	ग	–	ग	सा
मैं	नी	ऽ	रै	ह्	णा	ऽ	कि	लि	या	मिं	ऽ	जो	–
सा	ग	–	म	–	ध	–	म	ग	–	म	–	ग	रे
ले	ई	ऽ	च	ऽ	ल	ऽ	सौ	गी	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

34. मिंजरा दा मेला़

आई गेया मिंजरा दा मेला़
असां चम्बे दी करी लैणी सैर
छल़-छल़ करदी रावी जे बगदी
टेढ़ी-मेढ़ी चलदी तां छैल़ बड़ी लगदी
चानणियां रातां दा नज़ारा सोणा लगदा
असां चम्बे दी करी लैणी सैर
मेन्जरे दे मेले च रेलमो जे नचणा
सोणे-सोणे लके पर काला़ डोरा सजणा
नची-नची छोरूया दे दिलां बिच बस्सणा
असां चम्बे दी करी लैणी सैर
चम्बे दे चौगाना छैल़-छैल़ नारां
सजी-बणी घुमदियां बिच बजारा
सौगी-सौगी पौंदिया ठण्डिया फुहारा
असां चम्बे दी करी लैणी सैर

भावार्थ :— लोक गीतों में त्योहारों और मेलों का चित्रात्मक वर्णन है। कुछ स्थान अपने सांस्कृतिक मेलों के लिए जाने जाते हैं। उन्हीं में से एक चम्बा है। यहां का मिंजर मेला प्राचीन समय में यहां के राजा द्वारा आयोजित किया जाता था। अब इस मेले को राज्य स्तरीय श्रेणी में रखा गया है। विभिन्न गतिविधियों द्वारा चम्बा की संस्कृति तथा परम्परा का संरक्षण करने के उपक्रम ने इसे अत्यन्त महत्वपूर्ण बना दिया है। आस–पास के रहने वाले लोगों में इसके प्रति चाव व उत्साह है। वही इस गीत में व्यक्त हुआ है। मेले के शौकीन के शब्दों में – मिंजरों का मेला आ गया। हम चम्बा की सैर करेंगे। वहां छल–छल बहती तथा टेढ़ी–मेढ़ी चलती रावी नदी का दृश्य चांदनी रात में बहुत सुन्दर लगता है। मेले में प्रसिद्ध स्थानीय नृत्यांगना रेलमो का नृत्य होगा। उसकी पतली सुन्दर कमर में काला डोरा बंधा होगा। वह नाच कर युवा ह्रदयों में बसेगी। चम्बे के चौगान (जहां पर मेला लगता है) में सुन्दर–सुन्दर युवतियां बन–ठन कर बाजार में घूमती हैं। साथ–साथ

स्वर लिपी :-

×			0		
रेगग	रेसासा	रेगग	रेरेसा	रे–रे	रेगसा
आईऽ	गेयाऽ	आईऽ	गेयाऽ	मिंऽज	रांऽदा
ध़सा–	साप़–	–––	पध़–	ग़––	प़–प़
मेऽऽ	ऽल़ाऽ	ऽऽऽ	असांऽ	चम्ऽ	बेऽदी
ध़सा–	रे–ध़	सा––	–सा–	ध़सा–	प़ध़–
करीऽ	लैऽणी	सैऽऽ	ऽरऽ	होऽऽ	असांऽ
ग़––	प़–प़	ध़सा–	रे–ध़	सा––	–सा–
चम्ऽ	बेऽदी	करीऽ	लैऽणी	सैऽऽ	ऽरऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

ठण्डी बून्दनियां पड़ती है। हम चम्बा की सैर करेंगे .....।" वास्तव में ये मेले घर से बाहर निकलने, दूसरों से मिलने तथा खरीददारी करने के भी बहाने होते हैं। यहीं से शादी–विवाह में प्रस्तावों का आदान–प्रदान भी होता है कभी–कभी।

35. आयां ओ ललारिया

ायां ओ ललारिया तूं बौह्यां ओ ललारिया
क्रे बैठणे जो दिन्दी तिज्जो पंद
ो पंद ओ ललारिया हो ....

नूरपुरे ते मैं नीम्बू मंगवादी आं जी नीम्बू मंगवादी आं जी
शाहपुरे दे जले़ खट्टे अम्ब
कि अम्ब ओ ललारिया हो ....

रिपुरे ते मैं टाफटा मंगादी आं जी टाफटा मंगादी आं
ोलि़या जो देणा गूड़ा रंग
ो रंग ओ ललारिया हो ......

लाई तां पह्नी गोरी अंगणे खड़ोती जी अंगणे खड़ोती जी
बिजली लसाकै गोरी दे अंग
हो अंग ओ ललारिया हो ......

ोलि़या तां पह्नी गोरी जातरा जो चली ए जी जातरा जो चली ए
ौकणी दे पेटे पेई गेई टुम्ब
ो टुम्ब ओ ललारिया हो .....

ावार्थ :— साज श्रृंगार की शौकीन युवतियों को विविध रंगी घाघरा—चोली ओढ़नी के प्रति आकर्षण होता है। इसी कारण रंग साज़ अर्थात ललारिया ा इस गीत में संवाद स्थापित है। ललारिया का स्वागत करती युवती उसे ठने के लिए पंद (खजूर या बांस की बनी चटाई) देती है। वह कहती है कि सने नूरपुर से नीम्बू और शाहपुर से खट्टे—मीट्ठे आम, उसे देने को मंगवाए ..... हरिपुर से टाफटा नामक कपड़ा मंगवाया है। वह चाहती है कि लारिया उसे गूढ़ा अर्थात गाढ़ा रंग दे। चटख गाढ़े रंग की चोली पहन कर ोरी आंगन में खड़ी होती है तो मानो उसके अंग पर बिजली लशक (चमक) ाती है। इस आकर्षक चोली को पहन कर वह मेला देखने जाती है तो सके सौन्दर्य को देख, सौतन के पेट में दाऊण पीड़ा उठती है ....। (बहु िवाह प्रथा के संकेत गीतों में हैं, पत्नियों के एक दूसरे के प्रति होड़ व ालन को रेखांकित करते हुए...।) इस गीत के अन्तिम दो बन्द, रंगसाज से

स्वर लिपी :-

x		0		x		0	
–	–	–	–	सा	सा	प़	प़
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	आ	यां	ओ	ल
प़	ध़	सा	सा	सा-	सा	प़	प़
ला	रि	या	तूं	बौह	यां	ओ	ल
प़	ध़	सा	रे	ध़	-सा	सा	सा
ला	रि	या	कि	बै	ऽठ	णे	जो
सा	रे	ग	रे	सा	सा	प़	प़
दिं	दी	ति	जो	पं	द	ऽ	हो
ध़	ध़	रे	रे	साध़	रे	रे	–
पं	द	ओ	ल	ला-	रि	या	ऽ
सा	–	–	–	सा	सा	प़	प़
हो	ऽ	ऽ	ऽ	आ	यां	वो	ल

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी

आग्रह करती युवती की कल्पना है जो वह अपने लिए संजोती है कि ललारिया द्वारा रंगी चोली उसे कितना आकर्षक बना देगी। वह दामिनी सी चमकेगी और सौत की ईष्या का लक्ष्य होगी।

36. पल भर बेई लैणा

पल भर बेई लैणा ओ छिन भर बेई लैणा ओ
बेई लैणा मेरेया बजीरा अड़ेया भुरज पते दिया छौंआ .....
पल भर कियां बैह्णा ओ छिन भर किया बैह्णा ओ
कियां बैह्णा मेरिए सुभद्रो आइयां चम्बे दियां तारा
पल भर बेई लैणा ....

रोटी खाई लेआं ओ डुध भत्त खाई लेआ ओ
खाई लेआं मेरेया बजीरा बाह्मण लांगी रसोइया
पल भर बेई लैणा ....

अज तू मरी जायां ओ सच्च तू मरी जायां ओ
मरी जाया मेरिए सुभद्रो तैं लोकां च चरचा कराया
पल भर बेई लैणा ....

गंगा नौंई लेया हो जमुना नौंई लेया हो
नौंई लेया मेरेया बजीरा सरीकां जो जाई पतियायां
पल भर बेई लैणा ....

भावार्थ :— मन की सहज उमंग तथा अकांक्षाओं की अभिव्यक्ति लोकगीतों में होती है। उत्कट प्रेम जाति व धर्म के बन्धन को नहीं मानता। परन्तु इस गीत में अपनी जात जाने का दुःख व्यक्त हुआ है। प्रेम झूठा है या दुःख कृत्रिम है। ख़ैर ..... प्रेम में डूबी नायिका प्रिय को (जिसे वह वजीर कह कर सम्बोधित कर रही है) मनुहार भरे स्वर में कहती है – पल भर, भुरज पत्र (भोज पत्र, जिसके पत्तों का पौराणिक ग्रन्थों में पन्नों के रूप में प्रयोग वर्णित है) की छांव में बैठ लो, मेरे वजीर।" वह उत्तर में कहता है कि उसे चम्बा से अर्थात वहां के राजा की ओर से बुलावे के लिए तार आया है। वह कैसे उसके आग्रह को माने। युवती उसे रोक लेने के लिए प्रयत्न करते कहती है – क्षण भर बैठ कर रोटी और दूध भात खा लो।" वह फिर राजा के आदेश का हवाला देता है। परन्तु इसी दौरान उसके कहने पर भोजन ग्रहण कर लेता है। क्योंकि अगली पंक्तियों में उसका क्रोध प्रकट हुआ है। वह गुस्से से सुभद्रा (युवती) को मर जाने का श्राप देता है। कि आज ही वह

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सा	सा	सा	रे
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	प	ल	भ	र
सा	नी	–	सा	ग	ग	रे	सा	–	–	सा	सा	सा	रे
बे	ई	ऽ	लै	ऽ	णा	ऽ	ओ	ऽ	ऽ	छि	न	भ	र
सा	नी	–	सा	ग	ग	रे	सा	–	–	–	–	–	–
बे	ई	ऽ	लै	ऽ	णा	ऽ	ओ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सा	प	म	प	–	नी	–	प	प	–	म	–	प	–
बे	ई	ऽ	लै	ऽ	णा	ऽ	मे	रे	ऽ	या	ऽ	ब	ऽ
म	–	ग	म	–	–	–	ग	रे	सा	सा	म	म	प
जी	ऽ	ऽ	रा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	अ	ड़े	या	ऽ
ग	म	–	ग	–	रे	सा	नी	–	–	सा	ग	रे	–
भु	र	ऽ	ज	ऽ	प	ऽ	ते	ऽ	ऽ	दि	ऽ	या	ऽ
सा	–	–	सा	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
छौं	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी

मर जाए क्योंकि उसने, उसकी जाति, भ्रष्ट कर दी है। प्रेम में डूबी सुभद्र उसे विकल्प देती है – मेरे प्रिय वजीर तुम पावन गंगा व जमुना में नहा लेन और अपनी बिरादरी (शरीक) को मना लेना।" वह स्पष्ट करती है कि वजीर को समाज की चिन्ता है, मन तो उसका भी सुभद्रा में बसता है।

37. लोहे देया टेरनुआ

ोहे देया टेरनुआ घड़ी भर नच्ची लै तू
ोहे देया टेरनुआ घड़ी भर नच्ची लै तू

दादा नी पुच्छणा दादी नी पुच्छणी फिरी कैं नी नचदा तू
लोहे देया टेरनुआ घड़ी भर नच्ची लै तू ...

ावा भी नच्ची गे माई भी नच्ची गेई फिरी कैं नी नचदा तू
ोहे देया टेरनुआ घड़ी भर नच्ची लै तू ...

चाचा भी नच्चगे चाची भी नच्चगी फिरी कैं नी नचदा तू
लोहे देया टेरनुआ घड़ी भर नच्ची लै तू

मावार्थ :– यह बहुत प्रसिद्ध नृत्य गीत है। द्रुत लय में होने के कारण शुरू होते ही पांव अनायास थिरकने लगते हैं। इसमें एक विदूषक की कल्पना की गई है ... लोहे के टेरनू, नाम व्यंग्य से दूल्हे को दिया गया। शादी–विवाह में गांव हार की औरतें दूल्हे से खूब हास परिहास करती हैं। लड़के को नाचने के लिए कहा जा रहा है। उसका संकोच देख कर वे कहती हैं कि तुम्हारे दादा–दादी से पूछने की जरूरत नहीं है। तुम क्यों नहीं नाचते। तुम्हारे मां–बाबा ने भी खुशी में फराटी (गोलाकार घुमना) लगा दी। तुम क्यों नहीं नाचते। सभी को नचाएंगे। तुम्हारे चाचा तथा चाची भी नाचेंगे। तुम क्यों नहीं नाचते ...। कांगड़ा के विवाह ही नहीं, अधिकांश संस्कार–अनुष्ठानों में नृत्य का बहुत महत्त्व है। हृदय की प्रसन्नता की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति नृत्य है ...। जिसके लिए बहुत कर्णप्रिय गीत यहां उपलब्ध हैं ...।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
--	--	सासा	नीध	धसा	सासा	रेग	रेसा
ऽऽ	ऽऽ	लोहे	देया	टेऽ	रनु	आंऽ	ऽऽ
धसा	सासा	रेग	गरे	सा-	--	--	--
घड़ी	भर	नची	लैऽ	तूऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
रेग	ग-	ग-	ग-	रे-	रेग	रेसा	सा-
दादा	ऽनी	पुच्छ	णऽ	दाऽ	दीनी	पुच्छ	णीऽ
धसा	सासा	रेग	गरे	सा-	--	--	--
फिरी	कैनी	नच	दाऽ	तूऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

38. बसणा पहाड़ां दा

बसणा पहाड़ां दा चंगा मेरे मित्तरा
रली-मिली अप्पू बिच रिहो मेरे मित्तरा
खूब कमाणा कनैं रजी करी खाणा
बोलणा कुसी जो नीं मंदा मेरे मित्तरा
बसणा पहाड़ां दा चंगा मेरे मित्तरा
नदियां तां नालू इत्थू गीत सुणांदे
करी दिन्दे दिलड़ू जो ठण्डा मेरे मित्तरा
बसणा पहाड़ां दा चंगा मेरे मित्तरा
मना रे भोले इत्थू माणू जे बसदे
ना कोई झगड़ा ना दंगा मेरे मित्तरा
बसणा पहाड़ां दा चंगा मेरे मित्तरा

भावार्थ :– कांगड़ा में बहुत सारे गीत हैं जो यहां के अर्थात पहाड़ों के परिवेश की प्रशंसा में लिखे गए हैं। परन्तु यह गीत प्रशंसा के साथ–साथ एक सन्देश भी देता है कि पहाड़ों में बसना बहुत अच्छा है। पर ज़रूरी है कि परस्पर सदभावपूर्ण रहा जाए। जीवन जीने की वास्तविक पद्धति बताते हुए कहा गया है कि खूब मेहनत से कमाया जाए और भोगा भी जाए। किसी की व्यर्थ आलोचना में समय न गंवाया जाए। पहाड़ों में नदियां कल–कल कर बहते हुए मानों गीत सुनाती हैं। दिल को शान्त व सुखी कर देते हैं। जैसी यहां की प्रकृति है, ठण्डी–शान्त व सरस। वैसा ही रहने वालों का स्वभाव है। लोग चालाक व धूर्त नहीं हैं। मन के अत्यन्त भोले हैं यहां के लोग। यहां झगड़ा व दंगा नहीं होता। यद्यपि आज थोड़ा परिवर्तन हुआ है। परन्तु फिर भी अन्य राज्यों की अपेक्षा में हमारा पहाड़ी प्रदेश सुख व सन्तोष से परिपूर्ण है। अतः यहां बसना अत्यन्त सुखद है।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
-	-	-	-	-	प़ध़	सा-	रे-
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	बस	णाऽ	पऽ
ग	म	ग	रे	--	ग-	गम	मग
हा	ऽ	ड़ां	दा	ऽऽ	चंऽ	गामे	ऽरे
रे-	-सा	रेसा	ध़-	प़-	प़ध़	सा-	रे-
मिऽ	ऽत	राऽ	ऽऽ	ऽऽ	रऽ	लीमि	लीऽ
ग-	म-	ग-	रे-	--	ग-	मग	-ग
अऽ	प्पूऽ	बिऽ	चऽ	ऽऽ	रिऽ	होमे	ऽरे
रे-	सा-	सा-	--	--	सा-	-सा	सा-
मिऽ	तऽ	राऽ	ऽऽ	ऽऽ	खूऽ	ऽव	कऽ
सा-	सा-	प़ध़	साध़	प़-	गरे	ग-	रेसा
माऽ	ऽणा	कऽ	नैंऽ	ऽऽ	रऽ	जीऽ	करी
सा-	--	--	सा-	--	प़-	ध़-	सारे
खाऽ	ऽऽ	ऽऽ	णाऽ	ऽऽ	बोऽ	ऽल	णाकु
ग	म	ग	रे	--	ग-	गम	मग
सी	ऽ	जो	नीं	ऽऽ	मंऽ	दाऽ	मेरे
रे-	-सा	सा-	--	--	--	--	--
मिऽ	ऽत	राऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

39. घरैं छुट्टियां आईजा

घरैं छुट्टियां आई जा हो जम्मुआ देया मेया नौकरा साहूकारा
मेरे खेलण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो
साहब छुट्टी नी दिन्दा हो काँगड़े दिये गोरिये मुटियारे
तेरे खेलण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो
मिन्जो झांझर घड़ाई दे हो जम्मुआ देया मेया नौकरा साहूकारा
मेरे पैह्नण दे दिन दो जवानी चार तिहाड़े हो
तिज्जो झांझर घड़ांगा हो काँगड़े दिये गोरिये मुटियारे
तेरे पैह्नण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो
मिन्जो घघरा लियाई दे हो जम्मुआ देया मेया नौकरा साहूकारा
मेरे पैह्नण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो
तिज्जो घघरा लेओंगा हो काँगड़े दिये गोरिये मुटियारे
तेरे पैह्नण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो
मिन्जो नत्थ घड़ाई दे हो जम्मुआ देया मेया नौकरा साहूकारा
मेरे पैह्नण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो
तिज्जो नत्थ घड़ांगा हो काँगड़े दिये गोरिये मुटियारे
तेरे पैह्नण दे दिन दो जवानी चार दिहाड़े हो

भावार्थ :— यह गीत एक उपालंभ है। जीवन दो दिन का है और पति नौकरी के लिए परदेस में है। गीत श्रृंगार रस प्रधान है। जिसमें प्रिय–प्रियतम के बीच के वियोग का चित्रण है। प्रिया अर्थात पत्नी नौकरी के लिए परदेस गए पति से कह रही है कि जम्मू नौकरी के लिए गए प्रिय तुम घर आ जाओ। मेरे खेलने अर्थात मौज–मस्ती के दो ही दिन है। यह जवानी चार दिनों की है। पति कहता है कि साहब छुट्टी नहीं देता। मेरी कांगड़ा की गोरी मैं समझता हूं कि तेरी जवानी चार दिनों की है ...। पति से पत्नी विभिन्न उपहार

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
--	--	--	--	--	--	--	प़प़
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	घरैं
प़ध़	ध़सा	सासा	"रेरे	रे-	--	--	रेरे
छुटि	याऽ	आईऽ	जाऽ	होऽ	ऽऽ	ऽऽ	जमु
रेरे	सासा	--	सासा	सारे	रेग	गरे	रेरे
यांऽ	देया	ऽऽ	मेया	नौऽ	ऽक	राऽ	साहू
सा-	सा-	--	प़प़	प़ध़	ध़सा	सारे	रेग
काऽ	राऽ	ऽऽ	मेरेऽ	खेल	ऽण	देऽ	दिन
रे-	-रे	"रे-	साध़	--	ध़सा	सारे	रेसा
दोऽ	ऽज	वाऽ	नीऽ	ऽऽ	चार	दिहा	ऽड़े
सा	-	-	-	-	-	-	-
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

मांगती है। वह कहती है कि मुझे झांझर घड़वा दो। मेरे लिए घाघरा ला दो। मेरे लिए नथ भी घड़वा दो क्योंकि जवानी के चार ही दिन इन्हें पहनने के हैं। पति आश्वस्त करता है कि वह उसकी मांगे पूरी करेगा। वह समझता है कि साज–श्रृंगार के दिन थोड़े ही होते हैं।

40. कैसा लगा गोरिए पहाड़ां दा बसणा

कैसा लगा गोरिए पहाड़ां दा बसणां
दिल लुटी लेई गेया हो तेरा हस्सणा

पहाड़ां दे मनुख हो बड़ा सच्च बोलदे
दिले वाला भेद जेहड़ा सारा वो खोलदे

पिपले दे बूटे उपर कुकु बोलदा
औऐ तेरी याद मेरा मन वो डोलदा

करी लैणी पहाड़ा दी सैर गोरिए
जी भरी गलां करी लै वो छोरिये

दिल लाणा हुन्दा नी असान गोरिए
बड़ा ज्यादा खरा नी प्यार छोरिए

पेई जान्दे पिछों घर बार छडणे
बदनामी बाले वो इल्जाम लगणे

अजकेयां बिछड़ेयां फिरी कदू मिलणा
तेरे बाजी दिल मेरा नई ओ लगणा।

भावार्थ :— इस गीत में दो प्रेमियों के बीच के संवाद चित्रित हैं। प्रियतम पूछ रहा है कि गोरी, तुझे पहाड़ी प्रदेश में रहना कैसा लगा ? तेरी हंसी मेरा दिल लूट कर ले गई। पहाड़ के लोग सत्यभाषी होते हैं। अपने मन का सारा भेद सरलतापूर्वक खोल देते हैं। पीपल के बूटे पर बैठा कूकू पंछी जब–जब पुकारता है। मुझे तेरी याद सताती है। पहाड़ों की सैर करेंगे तथा जी भर

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
--	साग॒	ग॒-	म-	ग॒सा	-ग॒	सा-	नि-
ऽऽ	कैसा	लऽ	गाऽ	गोऽ	ऽरि	एऽ	पहा
निसा	साग॒	ग॒-	ग॒-	ग॒म	मप	मम	ग॒-
ड़ांऽ	दाऽ	बऽ	सऽ	णाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
ग॒-	ग॒म	प-	म-	ग॒सा	-सा	ग॒-	ग॒-
ऽऽ	दिल	लुऽ	टीऽ	लेई	ऽगे	याऽ	होऽ
ग॒म	मप	प-	मग॒	ग॒-	मग॒	सा-	नि-
तेऽ	राऽ	हऽ	स्सऽ	णाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

कर बातें करेंगे। प्रियतम कहता है कि दिल लगाना आसान नहीं होता और बहुत ज्यादा प्यार करना भी ठीक नहीं है। इस प्रेम में पड़ कर, घर--बार छोड़ने पड़ जाते हैं। यदि उन्हें यह सम्बन्ध मन्जूर न हो। ऊपर से बदनामी का दाग लग जाता है। लोग चर्चा करने लगते हैं। प्रिया तर्कपूर्ण उत्तर देती है कि बातें करेंगे और प्यार भी करेंगे क्योंकि आज बिछुड़ने पर फिर पता नहीं कब मिलना होगा। तुम्हारे बिना मेरा मन नहीं लगेगा ...। इस गीत में दो प्रेमियों के प्रेम तथा इस प्रेम को लेकर समाज के प्रतिरोध को अभिव्यक्ति मिली है। हृदय प्रेम में डूब जाता है परन्तु बुद्धी घर--परिवार की चिन्ता में घुलती है।

41. पाणी पीणा हो

पाणी पीणा हो पाणी पीणा हो
हो रामा कामलुए दिया बाई असां पाणी पीणा हो

रोटी खाणी हो रोटी खाणी हो
तेरी सौंह् धारा दिया ढाका असां रोटी खाणी हो

हो दाड़ू खाणे हो दाड़ू खाणे हो
हो तेरी सौंह् दाड़ले दिया धारा
असां दाड़ू खाणे हो

हो मेले जाणा हो मेले जाणा हो
हो रामा बाड़िया री धारा असां मेले जाणां हो

हो गंगी गाणी हो गंगी गाणी हो
हो तेरी सौंह् बाड़िया दे मेले असां गंगी गाणी हो

भावार्थ :— बहुत सारे गीतों में पहाड़ की जलवायु व प्रकृति का चित्रण है। कांगड़ा घाटी की दृष्यावलियों को जीवन से जोड़ कर देखा गया है। रूपक बांधे गए हैं। मंतव्य कुछ और है तो शब्द कुछ और ... ऐसा ही गीत है। बात कही जा रही है कि हम पानी पिएंगे ... कामलुए दिया बांई (कामल के पेड़ों की छांव तले की बावड़ी में) असल में बताया जा रहा है कि हमारे यहां, पेड़ों की घनी छांव में, जगह–जगह बावड़ियां हैं। जो प्यास बुझाती है। हम रोटी खाएंगे, पहाड़ की ढलान पर। कांगड़ा घाटी में ऐसी पठारनुमा पहाड़िया हैं जो फलों से भरी हैं ... दाड़ू (अनार) खाएंगे। दाडुओं से भरी ऊंची बाड़ी (पेड़ों से घिरी ऊंची व समतल जगह) पर मेले लगेंगे। उसी मेले में हम गंगी (विशेष लोक गायन शैली) गाएंगे ...। जीवन का आनन्द तथा गीत–संगीत

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	प़	प़	प़ध़	ध़रे	रे	–
ऽ	ऽ	पा	णी	पीऽ	णाऽ	हो	ऽ
सा	ध़	साध़	प़	प़ध़	ध़रे	रे	–
ओ	ऽ	पाऽ	णी	पीऽ	णाऽ	हो	ऽ
–	सा	रे–	ग–	रे–	ग–	सा	रे–
ऽ	हो	राऽ	माऽ	काऽ	मलु	ए	दिया
साध़	–	ध़–	सा–	रे	ग	सा	रे
बा	ई	अंऽ	साऽ	पा	णी	पी	णा
सा	–	–	–	–	–	–	–
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

सब कुछ प्राकृतिक परिवेश में परिकल्पित है। बिना संगोष्ठियों, भाषणों के ये गीत शुद्ध पर्यावरण को ज़ीवन की अनिवार्यता सिद्ध कर देते हैं।

42. सोणी सोणी शिमले दियां

सोणी-सोणी शिमले दियां सड़कां जिन्दे
हाए छैल़ छबीलियां सड़कां जिन्दे
काल़ी घघरी लेई औंयां

सोण महीने आईयां बरखां बहारां
हवा पाणी सोगी लिआइयां ठण्डियां फुहारां
ठण्डियां फुहारां
कोई ओन्दा पारलिया सड़कां जिन्दे
दिल रोई-रोई करदा अरजां जिन्दे
काल़ी घघरी ....

उड़ि जायाँ कागा मेरा लेई जा सुनेड़ा
लेई जा सुनेड़ा
अद्धी राती जो दिल मेरा धड़के जिन्दे
काल़े बदलां च बिजली चमके जिन्दे
काल़ी घघरी ....

भावार्थ :— यह गीत परदेसी प्रिय से घर आने का सप्रेम अनुरोध है। विरह वेदना से द्रवित हृदय का दुःख व्यक्त हुआ है। अपने पति या प्रिय से प्रिया निवेदन कर रही है, जो दूर शिमला में है, कि वहां की सड़कें अत्यन्त सुन्दर व साफ–सुथरी हैं। तुम वहां से आते हुए मेरे लिए काले रंग की घघरी ले आना। कुछ मंगवा कर वह उसका आना मानो निश्चित कर रही है। वह कहती है, बदलते मौसम उदास करते हैं। सावन में बरखा–बहार आई है। संग ठण्डी फुहार हवा लाई है ... बारिश मुझे भिगो रही है। ऐसे में पार वाली (सामने वाली) सड़क पर कोई आता हुआ दिखता है तो मेरा मन अरज (प्रार्थना) करता है कि वह तुम्ही हो ....।

कागा को सन्देश देती वह कहती है कि तुम मेरे प्रिय तक मेरी बात पहुंचा दो ...। आधी–आधी रात को मेरा दिल धड़कता है। जब काले बादलों में बिजली चमकती है ... अर्थात बरसात की ऋतु दिल बहुत डराती है ...। किसी भी तरह वह प्रियतम को घर आने के लिए मना लेना चाहती है। वर्षा ऋतु प्रेम पगे हृदय के लिए उद्दीपन का कार्य करती है।

स्वर लिपी :-

×			२				०			३			
-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	सा	-	सा	-
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	सो	ऽ	णी	-
म	रे	म	म	-	-	-	म	म	-	म	-	म	-
सां	ऽ	ऽ	णी	ऽ	ऽ	ऽ	शि	म	ऽ	ले	ऽ	दि	य
प	ध	-	व	-	सां	ध	धा	-	-	ध	-	ध	-
स	ड़	ऽ	कां	ऽ	ऽ	जिं	दे	ऽ	ऽ	हा	-	ए	ऽ
ध	प	-	ध	-	-	ध	प	प	-	म	-	म	-
छै	ऽ	ऽ	ल़	ऽ	ऽ	छ	बी	लि	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ
प	ध	-	प	-	सां	ध	ध	-	-	ध	-	ध	-
स	ड़	ऽ	का	ऽ	ऽ	जिं	दे	ऽ	ऽ	का	ऽ	ली	ऽ
ध	ध	-	ध	-	-	ध	प	प	म	म	-	-	-
घ	घऽ	री	ऽ	ऽ	ले	ई	औं	ऽ	याँ	ऽ	ऽ	ऽ	
अन्तरा													
ध	-	ध	सां	-	-	सां	नि	रें	सां	नि	ध	ध	प
सो	ऽ	ऽ	ण	ऽ	ऽ	म	ही	ने	-	आ	ई	यां	ऽ
प	ध	-	प	म	-	म	प	ध	-	ध	-	-	-
ब	र	ऽ	खां	ऽ	ऽ	ब	हा	ऽ	ऽ	रां	ऽ	ऽ	ऽ
ध	-	ध	सां	-	-	सां	नि	रें	सां	नि	ध	ध	प
ह	वा	ऽ	पा	णी	ऽ	ऽ	सो	गी	ऽ	लिं	आ	इ	यां
प	ध	-	प	त	-	म	प	ध	-	ध	-	-	-
ठं	डि	ऽ	यां	ऽ	ऽ	फु	हा	ऽ	रां	ऽ	को	ऽ	ई
म	रे	म	म	ऽ	ऽ	ऽ	म	म	ऽ	म	-	म	-
ओं	ऽ	ऽ	दा	ऽ	ऽ	ऽ	पा	र	ऽ	लि	ऽ	या	ऽ
प	ध	-	प	-	सां	ध	ध	-	-	ध	-	ध	-
स	ड़	ऽ	कां	ऽ	ऽ	जिं	दे	ऽ	ऽ	का	ऽ	ली	ऽ
ध	प	ऽ	ध	-	-	ध	प	प	म	म	-	-	-
घ	घ	री	ऽ	ऽ	ले	ई	औं	ऽ	ऽ	यां	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

43. छोटी सुरगाणी बड्डा डैम बणेयां

ोटी सुरगाणी बड्डा डैम बणेयां
हले था पहाड़ हुण मदान बणेयां
ोटी सुरगाणी बड्डा डैम बणेयां

उठ बिल्लो उठ मिंजो चा बनाई दे
नो बजे पुजणा सुरगाणी जाई के
चाई दा रवाज पैहले कोई न थिया
टीवी दा मरीज पैहले कोई न थिया
छोटी सुरगाणी ....

ड़क बणाणी कैंची मोड़ लगदा
ब्बल चलाणी बड़ा जोर लगदा
ट्टे मिट्ठे आलू छोले खाई लै सजणा
ोस्ती पुराणी नोई लाई लै सजणा
ोटी सुरगाणी ....

ावार्थ :— चम्बा से लगभग पैंतालिस कि0मी0 की दूरी पर स्थित सुरगानी ामक स्थान पर बैरा खड्ड (तीसा से आता नाला) तथा भांपल क्याह्रा से आती खड्ड (नाला) पर बांध बनने पर यह गीत सृजित हुआ। गीत में भव्य निर्माण के प्रति उत्साह तथा खुशी का भाव चित्रित हुआ है। यद्यपि यह गीत चम्बा ंचल का है। परन्तु कांगड़ा ही नहीं समग्र हिमाचल प्रदेश में इसे गाया जाता है। बांध में नौकरी मिलने की खुशी प्रकट हुई है। वैरा तथा स्यूल छोटे ाले हैं। परन्तु इसके पानी को बांध कर विशाल बांध बना है। बिल्लो (पत्नी

स्वर लिपी :

×		0		×		0	
प-	पम॑	प	ध	प-	पम॑	म॑ग	गग
छोऽ	टीऽ	सु	र	गाऽ	णीऽ	वऽ	ऽडा
ग-	रे-	रे	ग	रेसा	-	-	-
डैऽ	मऽ	ब	णे	यांऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सा-	सा-	ग	म॑	प	प	नी-	नीसां
पह	लेऽ	थे	प	हा	ड़	हुण	मैऽ
सां	नि	धप	प	म॑प	म	ग	रेसा
दा	न	बऽ	णे	यांऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

को सम्बोधित) "उठ, तू मेरे लिए चाय बना दे। मुझे नौ बजे तक सुरगानी पहुंचना है।" वह कहती है कि चाय का चलन पहले नहीं था। और टी0वी0 के मरीज़ भी पहले नहीं थे। पति बताता है कि सड़क बनी है, जो कैंची मोड़ लगता है। परन्तु झब्बल चलाते हुए ज़ोर लगाना पड़ता है। पत्नी बड़ी उम्र में है। कहती है कि खट्टे–मिट्ठे आलू–छोले खा लो ... हमारा सम्बन्ध पुराना है। इसमें नयापन ले आओ .. सुरगानी नामक स्थान छोटा है परन्तु बहुत बड़ा बांध यहां बनाया गया है ...। यह गीत निर्माण को समर्पित है। जो जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होने वाले बांध की प्रशंसा में रचा गया है।

44. इक जोड़ा सूटे दा

इक जोड़ा सूटे दा ओ जानि मेरिये हो
पैहनण वालियाँ दो जणियां
दोऐ जणियाँ लड़ि पेईयाँ ओ जानि मेरियो ओ
ओ कन्द परदेस ओ
ओ उआरे-उआरे मैं चलाँ ओ पारें-पारें तु चले
दोआँ बिच बगदि रौई ऐ ओ जानि मेरिये ओ
ओ चन्दरी बण्डेर ओ
इक मन बोलदा कि नदिया में डुबी मरां
दुआ मन बोलदा ओ जानि मेरिये ओ बालड़ी बरेस ओ
अमां मेरी रोमदी ओ बापु मेरा झूरदा
भाई मेरा तोपदा जी नदिया दे फेर ओ
इक बख खाई लेया जले दियां जलकियां
दुआ बख रेई गेया ओ सपड़े दे हेठ ओ
ओ सपड़े दे हेठ ओ ....।
ओ सपड़े दे हेठ ओ .....॥

भावार्थ :— बहुत प्राचीन गीत है — चिटी—चिटी चादर ...। जिसके अन्त में नदी में डूब कर जान देने का करूण प्रसंग है। इस प्रसंग के प्रति लोक मानस का रूझान इतना रहा है कि कई गीतों में मुखड़ा कुछ और है परन्तु अन्त इसी से होता है ...। जान दे देने की वजह भिन्न है। परन्तु अन्ततः गीत इन्हीं पंक्तियों पर समाप्त होता है कि इक बख खाई लेआ हो जले दियां जलकियां। दुआ बख रहि गेया सपड़े दे हेठवे..." यहां मृत्यु वरण का कारण सौतन है। .... सूट का एक जोड़ा है। परन्तु पहनने वाली दो हैं। इसमें बहू विवाह के विरोध में एक सुप्त स्वर कुलबुलाता सा प्रतीत होता है। इस बात पर पति से मनमुटाव हो जाता है। दोनों जैसे नदी के दो छोर हो जाते हैं .. इस ओर मैं चलूं तो दूसरी तरफ़ तूं है। दोनों के बीच रावी नदी है ... . । एक मन बोलता है कि मैं इस में डूब मरूं। परन्तु दूसरी आवाज़ भीतर से आती है कि छोटी उम्र है ....। लेकिन अन्ततः वह छलांग लगा देती है।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
सा	सा	रे	सा	–	सा	–	रे
इ	क	जो	ड़ा	ऽ	सू	ऽ	टे
म	–	–	सा	सा	रे	मप–	प
दा	ऽ	ऽ	ओ	जा	नी	मेरि	ये
प	–	–	–	म–	रे–	रे	म–
हो	ऽ	ऽ	ऽ	पैह	नण	वा	लियां
प	–	–	म–	म	–	–	–
दो	ऽ	ऽ	ज़णि	यां	ऽ	ऽ	ऽ
सा	सा	रे–	सा	–	सा	रे	रे–
दो	ऐ	ज़णि	याँ	ऽ	ल	ड़ी	पेई
म	–	–	सा	सा	रे	मप	प
याँ	ऽ	ऽ	ओ	जां	नी	मेरि	ये
प	–	–	–	म	रे	रे	म
हो	ऽ	ऽ	ऽ	कं	द	प	र
प	–	–	म	म	–	–	–
दे	ऽ	ऽ	स	ओ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी

अतिकल्पना (फैंटेसी) का प्रयोग हुआ है। युवती मर जाने के बाद देख रही है कि उसकी मां रो रही है और पिता दुःख में झूर रहे (बुढ़ा रहे) हैं। भाइ नदी के दोनों ओर ढूंढ रहा है ...। पर उसे क्या मिलेगा ? शरीर का एक हिस्सा मछलियों ने खा लिया है और दूसरा सप्पड़ों (रपटील बड़े–बड़े पत्थर) के नीचे है ...।

45. नच्च मेरी घुंगरिये

ाच्च मेरी घुंगरिये इसा ढोलकी री ताना हो
ैं ताँ भला कियां नचणा मेरा मोचणू पुराणा हो

नच्च मेरी घुंगरिये इसा ढोलकी री ताना हो
मैं ताँ भला कियां नचणा मेरा घघरा पुराणा हो

ाच्च मेरी घुंगरिये इसा ढोलकी री ताना हो
ैं ताँ भला कियां नचणा मेरा चोला पुराणा हो

नच्च मेरी घुंगरिये इसा ढोलकी री ताना हो
मैं ताँ भला कियां नचणा मेरा सालणू पुराणा हो

ावार्थ :— इस गीत की लय–ताल व इसका सुर ऐसा है कि पांव अनायास थिरकने लगते हैं। नृत्य–गीतों में इसका विशेष स्थान है। एक और बात इस ीत को खास बना देती है कि इसमें अपनी प्रिया से, झूम कर नाच उठने का आग्रह है। ... नाच मेरी घुंगरिए ! (प्रिया का नाम – जिस नाम में ही ुंघरूओं की मधुर खनक है।) इस ढोलकी की तान पर।" अर्थात ढोलकी ाजाता प्रियतम, प्रिया से नृत्य का अनुरोध कर रहा है। वह इतराती सी कहती ै कि मैं कैसे नाचूं, मेरे मोचणू (जूते) पुराने हैं। वह फिर कहता है कि ाचो। तो वह कहती है कि मेरा घाघरा पुराना है। फिर कहती है कि मेरा ोला (गद्दी जनजाति में चोली व घाघरा परस्पर सिला हुआ होता है – इसी को चोला कहा जाता है) पुराना है। इसी क्रम में वह सालणू (दुपट्टा) का नाम

स्वर लिपी :-

×			0		
साप	पप	मग	रेग	रेसा	मम
नच	मेरी	घुंऽ	गरि	येऽ	इसा
गरे	सासा	नीप	-नी	सा-	--
ढोल	कीरी	ताऽ	ऽना	होऽ	ऽऽ
सासा	रेप	गग	रेग	रेसा	मम
मैंताँ	भला	कियां	नच	णाऽ	मेरा
गरे	सासा	नीप	-नी	सा-	--
मोच	णूपु	राऽ	ऽणा	होऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

भी लेती है। वह बहाने बना रही है। साथ–साथ वह फरमाइश भी कर रही है। प्रिय को उसका नृत्य देखना है तो कुछ भेंट भी देनी होगा ...।

46. लिख लिख चिट्ठियां

लिख-लिख चिट्ठियां मैं भेजां बलोचा हो
अम्ब पक्के घरैं भलेया लोका हो
अम्ब पक्के तां खरा होया बलोचणिये
साहब छुट्टी नई दिन्दा भलिये लोकणिये

लिख-लिख चिट्ठिया मैं भेजां बलोचा हो
भैण जुआनड़ी होई भलेया लोका हो
पैसेयां दी गठड़ी मैं भेजा बलोचणिये
भैणा जो तू व्याह भलिये लोकणिये

लिख-लिख चिट्ठिया मैं भेजा बलोचा हो
भाई मुआ घरैं आ भलेया लोका हो
भाई मुआ तां बुरा होया बलोचणिये
बांह मेरी भजी गेई है भलिये लोकणिये

लिख-लिख चिट्ठिया मैं भेजा बलोचा हो
मां मुई घरैं आ भलेया लोका हो
मां मुई तां बुरा होया बलोचणिये
चौकां सुन्ना होया भलिये लोकणिये

लिख-लिख चिट्ठिया मैं भेजा बलोचा हो
साहवे छुट्टी दिती भलिये लोकणिये
छुट्टी दिती तां खरा होया बलोचा हो
हुण तैं घरैं जो औणा भलेया लोका हो

भावार्थ :— रोज़ी–रोटी कमाने के लिए बाहर गए, विशेष रूप से सेना में भर्ती व्यक्ति की व्यथा कथा इस गीत में अभिव्यक्त हुई है। एक और महत्वपूर्ण बात इसमें यह है कि कांगड़ा जनपद में आज़ादी से पूर्व बलोचीस्तान के बलोच या पठान भी रहते थे। (अब बलोचीस्तान पाकिस्तान का हिस्सा है।) बलोच व बलोचणी (पत्नी) के बीच कांगड़ा की बोली में संवाद रूप में यह गीत है ...। बलोचणी अर्थात बलोच की पत्नी कहती है कि मैं चिठ्ठियां लिख–लिख कर भेज रही हूं। आम पक गए हैं तुम घर आ जाओ। वह जवाब देता है कि अच्छा हुआ, फल पक गए। परन्तु मुझे मेरा साहिब छुट्टी नहीं देता। वह कहती है कि तुम्हारी बहन जवान हो गई है। पति का उत्तर है कि पैसों की गठड़ी भेज रहा हूं तुम मेरी बहन का विवाह कर दो। भाई की मृत्यु की ख़बर पाकर वह कहता है कि मुझे लगता है कि मेरी बांह टूट गई। परन्तु

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
सासा	रेरे	धृधृ	सासा	रे-	म-	रे-	म-
लिख	लिख	चिठि	यांऽ	मैंऽ	भेऽ	जांऽ	बऽ
प-	ध-	प-	--	--	--	--	--
लोऽ	चांऽ	होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
मप	धप	ध-	पम	म-	रे-	मप	पध
अंऽ	बप	क्केऽ	घरैं	आऽ	ऽऽ	भले	याऽ
प-	मप	म-	--	--	--	--	--
लोऽ	ऽका	होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सासा	रेरे	धृधृ	सासा	रे-	-म	रे-	-म
अंऽ	बप	केऽ	तांऽ	ख़रा	ऽहो	याऽ	ऽब
प-	ध-	प-	--	--	--	--	--
लोऽ	चणि	येऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
मप	धप	ध-	पम	म-	-रे	मप	पध
साह	बछु	टीऽ	नेई	दिंऽ	ऽदा	भलि	येऽ
प-	पम	म-	--	--	--	--	--
लोऽ	ऽक	णिऽ	येऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

मुझे छुट्टी नहीं मिलती। बलोचणी चिट्ठी लिख कर मां की मृत्यु की सूचना देती है। उत्तर मिलता है कि मां के नहीं रहने से रसोई सूनी हो गई। पर मैं नहीं आ सकता। अन्ततः वह पत्नी को सूचित करता है कि अब उसे छुट्टी मिल रही है। पत्नी आश्वस्त भाव से कहती है कि अच्छा, आ जाओ ...। जीवन के सुख और भीषण दुखों के पलों में वह घर नहीं आ पाता ... यह रोजगार के लिए भर्ती जवानों की कठिनाई है।

47. धान बड्डे अच्छरिये

धान वड्डे अच्छरिये कूड़ी लम्मी हो
मिंजो तां भला काँगड़े दी कुड़ी गम्मी हो
लारा लप्पा अच्छरिये लारा लप्पा हो
काँगड़े देया छोरूयां कनैं मारे गप्पां हो
घरैं ओयां अच्छरिये घरैं औयां हो
घरैं नी औणां तां मेरे डेरे औयां हो
दस रूपइये अच्छरिये दस रूपइये हो
काँगड़े देया मोड़ा मंज बस गेई ऐ हो
बरखा लग्गी अच्छरिये बरखा लग्गी हो
काँगड़े दियां पहाड़ियां मंझ बरखा लग्गी हो

भावार्थ :— यह एक प्रणय गीत है जिसमें युवक, युवती को अपनी भावनाओं से अवगत करवाना चाहता है। बहुत सारे लोक गीत सम्बोधन से आरम्भ होते हैं। कुछ गीतों में परस्पर संवाद होते हैं। लेकिन कुछ गीत एक ओर से ही कहे/गाए जाते हैं। यह इसी तरह का गीत है। परोक्ष रूप से प्रेम निवेदन करते हुए युवक कहता है कि अच्छरिए धान काट लिए गए हैं ...। कूड़ी (धान की पराली को संगेलने वाली लकड़ी या बांस की लाठी) लम्बी है। और मुझे तो कांगड़ा देस की युवती पसंद आ गई है। इधर–उधर की बातें की जा रही हैं। अच्छरी कांगड़ा के छोरूओं (युवकों) से गप्पें हांक रही है। फिर वह कहता है कि तू मेरे घर आना। यदि घर न आ सके तो मेरे डेरे पर आना। उसे कांगड़ा की वादियां याद आ रही हैं। वह कहता है कि कांगड़ा के मोड़ों से बस गुज़र रही है। वर्षा हो रही है। अच्छरिए कांगड़ा की पहाड़ियों पर बारिश पड़ रही है ...। इस गीत में प्रणय निवेदन के साथ–साथ कांगड़ा की स्मृतियों को भी शब्दबद्ध किया गया है ...।

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
ध़- धाऽ	-रे ऽन	रे- बऽ	रेसा डडे	सा- अऽ	रे- च्छरि	ग- येऽ	-- ऽऽ
पग कूऽ	गरे ऽड़ी	रेसा लम्	साध़ मीऽ	प़- होऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ
ध़- मिऽ	धरे जोत	रे- भऽ	रेसा ऽला	सा- काँऽ	रे- गऽ	ग- ड़ेऽ	ग- दीऽ
पग कूऽ	गरे ऽड़ी	रेसा गऽ	साध़ म्मीऽ	सा- होऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

48. पखला माणू खौदल़ा पाणी

पखला माणू खौदल़ा पाणी हो डर लगदा
मेरेया पाणियां कुडाणिया फिरी कुड्डैं तू

आई मिंजो चलदी जो याद हो रस्ता भुल्ली
मेरेया पाणियां कुडाणिया फिरी कुड्डैं तू
पखला ....

आई मिंजो खान्दी जो याद हो खाणा भुल्ली
मेरेया पाणियां कुडाणिया फिरी कुड्डैं तू
पखला ....

आई मिंजो लिखदी जो याद हां लिखणा भुल्ली
मेरेया पाणियां कुडाणिया फिरी कुड्डैं तू
पखला ....

आई मिंजो सौन्दी जो याद हो सौणा भुल्ली
मेरेया पाणियां कुडाणिया फिरी कुड्डैं तू

भावार्थ :— इस गीत में प्रेमिका के विछोह का वर्णन अत्यन्त प्रभावी ढंग से हुआ है। आरम्भिक पंक्ति एक सूक्ती की तरह है कि पखला (अपरिचित/अनजान) माणू (व्यक्ति) तथा खौदल़ा (मटमैला) पानी, भयभीत करता है। क्योंकि हमें उसके स्वरूप का पता नहीं होता। दूसरी पंक्ति प्रतीकात्मक है। यहां कुडाणिया पाणी से अभिप्राय प्रिय से है। जिससे फिर से प्रकट होने का अनुरोध है। प्रेमिका कह रही है कि मुझे हर पल तुम्हारी स्मृतियां घेरे रखती हैं चलते हुए याद आती है तो मैं राह भूल जाती हूं। खाते–खाते तुम्हें याद करती हूं तो खाना भूल जाती हूं। लिखते हुए, तुम्हारी याद लिखना भुला देती है। सोते हुए तुम्हारी याद आती है तो मैं सोना भूल जाती हूं ... हर बार वह अपने प्रिय से स्वता स्फूर्त धरा से निकले पानी (कुडणिया पानी) की तरह सामने आ जाने की मिन्नत करती है।

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	सा	सा	सा	ग
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	प	ख	ला	ऽ
ग	सा	–	सा	ध़	प़	–	ध़	रे	–	रे	–	ग	–
मा	णू	ऽ	खौ	द	ला़	ऽ	पा	णी	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ
[illegible]	सा	ध़	रे	–	रे	सा	सा	–	–	सा	सा	सा	ग
[illegible]	र	ऽ	ल	ऽ	ग	ऽ	दा	ऽ	ऽ	मे	रे	या	ऽ
रे	सा	–	सा	ध़	प़	–	ध़	रे	–	रे	–	ग	–
[illegible]	णि	ऽ	यां	ऽ	कु	ऽ	डा	णि	ऽ	या	ऽ	ऽ	ऽ
[illegible]	सा	ध़	रे	–	रे	सा	सा	–	–	सा	सा	सा	–
फ	री	ऽ	कु	ऽ	ड्डैं	ऽ	तूं	ऽ	ऽ	प	ख	ला	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

49. असां कुसी जो मन्दा नि बोलणा

असाँ कुसी जो मन्दा नीं बोलणा
चन्दे दी चानणी चन्दे कने

बड़ेयाँ घराँ दिया ब्याई के अन्दियाँ
हत्थ नीं लान्दियाँ कम्मे कने
सस्सू सौहरे जो मारदिया तान्नेयाँ
खसमे जो मारदियाँ डण्डे कने

असाँ ताँ कुसि जो मन्दा नीं बोलणा
चन्दे दी चानणी चन्दे कने

औंदिया नुआँ करीन्दिआं बणाइयाँ
चाबियां रखण परान्दे कने
परान्दे दि गट्ठ फिरि इयाँ नीं खुलदी
ऐ ताँ खुलदी दन्दे कने

असाँ ताँ कुसि जो मन्दा नीं बोलणा
चन्दे दी चानणी चन्दे कने

भावार्थ :— यह गीत हास्य—व्यंग्य प्रधान है। इसमें बात कही भी जा रही है परन्तु कहा यही जा रहा है कि हम तो किसी को कुछ नहीं कहते – मात्र सच्च बोलते हैं। ... हम किसी को बुरा नहीं बोलेंगे। परन्तु सत्य तो सत्य है ...। चांद की चांदनी, चांद के साथ ही रहेगी ...। अर्थात जो है वह तो है ही ...। कुछ लोग नई नवेली दुल्हनों को घर का कर्ता—धर्ता बना देते हैं। वे घर की चाबियां परान्दे के साथ बांध कर रखती हैं। परन्तु परान्दे की गांठ फिर खोले नहीं खुलती। खुलती है तो दांतो से ... अर्थात फिर ज़रूरत पड़े तो जबरन चाबी लेनी पड़ती है ...। वैसे हम तो किसी की निन्दा करेंगे नहीं ...। बड़े घरों को बेटियां बड़े चाव से ब्याह कर लाते हैं। वे काम से

स्वर लिपी :-

×			0			×			0		
सा	रे	म	म	म	म	ग	रे	म	रे	सा	नि़
अ	सां	कु	सी	ऽ	जो	मं	दा	नी	बो	ल	णा
प़	नि़	नि़	सा	सा	रे	ग	रेग	सा	सा	–	–
चं	दे	दी	चा	न	णी	च	न्दे	क	ने	ऽ	ऽ
मरे	म	प	प	–	–	रेप	प	–	मग	ग	–
बडे	याँ	घ	राँ	दि	यां	व्या	ई	के	अंदि	याँ	ऽ
म	म	प	प	धप	–	म	म	ग	रे	–	–
ह	त्थ	नीं	लां	दि	याँ	क	म्मे	क	ने	ऽ	ऽ
रे	रे	प	म	–	मग	रेग	ग	रे	सा	–	नि़
स	स्सू	सौ	हरे	ऽ	जोऽ	मार	दि	यां	ता	न्ने	याँ
प़प़	नि़	नि़	सा–	रे–	ग–	रेग	ग	रे	स	–	–
खस	मे	जो	मार	दियाँ	डंऽ	ऽडे	ऽ	क	ने	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

हाथ नहीं लगातीं। सास–ससुर को ताने लगाती हैं ... पति को डण्डे से पीट भी देती हैं। ... पर हम क्यूं किसी को कुछ बोलें ...। नहीं बोलते–बोलते सब कह देने वाला यह गीत एक चुहल भी है और व्यंग्य भी ...।

50. बारहाँ ताँ बरहियां माए पुत घर आया

बारहा ताँ बरहियां माए पुत घर आया
नज़री नी आई नुंह तेरी
नज़री नी आई नुंह तेरी अम्मा जी
नज़री नी आई नुंह तेरी
लेई क बिनुआँ लेई के घड़ोलुए
पाणी ल्यामण गेई है
इकि खुऐ दिखेया माये दुऐ खुऐं दिक्खेया
नज़री नी आई नुंह तेरी
लेई क दराटिया लेई के रसियाँ
घाए यामण गेई है
इकि बणे दिक्खेया माय दुऐ बणे दिक्खेया
नज़री नी आई नुंह तेरी
जोग गरि लैणा ओ बरागी बणी जाणा
मुड़ि के नीं हुण घर औणा
बारहाँ ताँ बरहियां माए पुत घर आया
नज़री नी आई नुंह तेरी
नज़री नी आई नुंह तेरी अम्मा जी
नज़री नी आई नुंह तेरी

भावार्थ :— कांगड़ा अंचल के लोक गीतों में सम्बन्धों की मिठास और आत्मीयता यदि है तो मनमुटाव और दुर्भावनापूर्ण कटुतम व्यवहार का चित्रण भी कहीं–कहीं शब्दबद्ध हुआ है। जिसमें मुख्यता सास–बहु के बीच के तनाव का चित्रण हुआ है। इस गीत में तो यह मतभेद सीमा का अतिक्रमण कर गया है। परदेस गए अपने पुत्र की पत्नी की हत्यारिन हो गई वह ...। यद्यपि बात संकेत रूप में ही कही गई है ...। बारह् वर्षों बाद घर आया पुत्र अपनी पत्नी के सम्बन्ध में पूछता है कि वह दिखाई नहीं दे रही। सास कहती है कि वह घड़ा तथा सिर पर घड़ा रखने हेतु बिनुआं लेकर पानी लेने गई है ... पुत्र कुंए–कुंए तक जाकर देखता है। पर वह नहीं मिलती। फिर कहता है कि अम्मा जी, आपकी बहु नज़र नहीं आ रही। सास दूसरा बहाना लगाती है कि

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	–	सा	सा–	सा
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	बा	रहाँ	ताँ
म–	––	ग	ग	–	म	प	मप
बर	हियां	मा	ए	ऽ	पु	त	घर
नि	प	म	ग	–	मम	–	–
आ	ऽ	या	ऽ	ऽ	नज़	री	नी
प	नि	प	म	म	–	–	–
आ	ई	नुं	ह	ते	ऽ	ऽ	ऽ
ग	रे	ग	रे	सा	सा–	सा	सा
री	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	नज़	री	नी
म–	––	ग	ग	–	म	प	मप
आ	ई	नुं	हं	ते	री	अ	मांऽ
नि	प	म	ग	–	मम	–	–
जी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	नज़	री	नी
प	निप	प	म	म	–	–	–
आ	ई	नुं	ह	ते	ऽ	ऽ	ऽ
ग	रे	ग	रे	सा	सा	सा–	सा
री	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	बा	रहां	ता

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

ाह दराटी तथा रस्सी लेकर घास काटने गई है ...। बन–बन ढूण्ढ कर खाली ौटा बेटा, सच जान जाता है। पीड़ित भाव से कहता है कि वह योग धारण करके वैरागी बन जाएगा। पलट कर कभी घर नहीं आएगा।

51. कुड़िये इन्दरदेइए

कुत्थूआं ते उगमी काल़ी बादल़ी, ओ मुंडुआ पिरथी सिंहा
कुत्थूआं ते उगमेया ठंडा नीर वे हां
छातिया ते उगमी काल़ी बादल़ी, ओ कुड़िये इंदरदेइए
नैणा ते उगमेया ठंडा नीर वे हां
कुन्हीं तां रंगी तेरी पगड़ी, ओ मुंडुआ पिरथी सिंहा
कुन्हीं तां कडेया रूमाल वे हां
भावो तो रंगीओ मेरी पगड़ी, ओ कुड़िये इंदरदेइए
नारा तां कडेया रूमाल वे हां
बिज तां कड़के तेरिया भाबियां, ओ मुंडुआ पिरथी सिंहा
नारा जो डस्से काल़ा नाग वे हां
विज तां हुंदी स्हाढ़ी कुलज़, नि कुड़िये इंदरदेइए
नाग तां कुले दा परोहत वे हां

भावार्थ :— इस गीत में एक युवती इन्द्र देई को एक युवक पृथ्वी सिंह आकर्षित करता है। वह उससे जानना चाहती है कि वह कुंआरा है या विवाहित। बातचीत का सिलसिला बढ़ाने के लिए वह बादल और बारिश से शुरूआत करते हुए कहती है कि यह काली बदली कहां से उमड़ती है और ठण्डा पानी कहां से आता है। युवक पृथ्वी सिंह को जैसे उसकी भावनाओं का परिचय मिल चुका है। वह जानता है कि उसके विवाहित होने की बात पर इन्द्र देई दुःखी हो जाएगी ..... दार्शनिक भाव से उत्तर देता है कि छाती से बदली अर्थात भाव उमड़ते हैं और आंखों से पानी यानी आंसू बहते हैं। युवती पूछती है कि तुम्हारी पगड़ी को किसने रंगा और तुम्हारे रूमाल पर कढ़ाई किसने की है। युवक उत्तर देते हुए कहता है कि मेरी भाभी ने पगड़ी को रंग दिया और मेरी नार अर्थात पत्नी ने रूमाल पर कसीदाकारी की ... . युवती इन्द्रदेई को यह बहुत बुरा लगता है। वह कड़वाहट से भर उठती है। श्राप देने पर उतरते कहती है कि तुम्हारी भाभी पर आसमानी बिजली पड़े

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
पृध कुत्थु	धृ-^सा^ आंऽ	धृपृ तेऽ	धृसा उग	धृसा यीऽ	धृ- काऽ	पृपृ ऽली	पृ- ऽऽ
पृध वाऽ	सा- ऽऽ	ग- दऽ	रे- लीऽ	रे- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ
-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	सा- होऽ	रे- मुंड	ग- याऽ
रे- पिर	रे- थीऽ	धृ- सिंऽ	धृसा हाऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ
पृध कुत्थु	धृ-^स^ आंऽ	धृपृ तेऽ	धृसा उग	धृसा मेया	सा- ठऽ	रेग ण्डा	-- ऽऽ
ग- नीऽ	रेसा ऽर	रे- वेऽ	सा- हांऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ	-- ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

और पत्नी को काला नाग डस ले .....। शान्त धीर पृथ्वी सिंह उत्तर में कहता है कि आसमानी बिजली तो हमारी कुल देवी है और काला फ़णिहर हमारे कुल का पुरोहित है...। अतः तुम्हारे दुर्वचन फ़लित नहीं होंगे .....। यह गीत विवाहित युवक के प्रति युवती के हृदय में उमड़ते प्रेम–अनुरोध की मार्मिक अभिव्यक्ति है।

52. सौगी चलै मेरा द्योर

मेला नन्दपुर दा, मेले जो जाणा जरूर,
मेलैं तां जाणा सौगी चलै मेरा द्योर
अट्ठा गजां दी घघरी सियांदी हां
दस्सां गजां दा फेर,
मेलैं तां जाणा घघरियां चुकै मेरा द्योर
मेला नन्दपुर दा, मेले जाणा जरूर,
मेले जो जांदी झूलेयां झूलदी
दिक्खी के हस्सै मेरा द्योर
मेलैं तां जाणा सौगी चलै मेरा द्योर
द्योर तां भाभी घरे ते जे निकले,
चढ़ी आया चक्ख हनेर,
मेले ता जाणा सरीकां मनाए मेरा द्योर

भावार्थ :— लोक गीतों में देवर—भाभी का माधुर्य व मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध चित्रित हुआ है। छोटी उम्र में विवाह हो जाता था। मन का बाल सुलभ खिलंदड़पन मन में बसाए हुए युवती ससुराल आती है जिसमें किशोर वय देवर का सहयोग मिलता। इस गीत में इसी स्नेह—मैत्री भाव से अभिभूत युवती नन्दपुर (कांगड़ा में एक स्थान, जहां गुलेर के राजा के भाई बसते हैं, जिन्हें कुंअर कहा जाता है) के प्रसिद्ध मेले में जाने की ज़िद कर रही है। अपनी तैयारियों का वर्णन करते हुए कहती है कि उसने आठ गज कपड़े की घेरेदार घघरी सिलवाई है जिसका घेरा दस गज है। (अतिश्योक्ति अलंकार है) वह मेले में ज़रूर जाएगी परन्तु शर्त यह है कि इस वज़नदार घघरी को देवर उठाए .... पीछे चलते हुए इसे थाम कर चले। कल्पना में मेले पहुंची भाभी कहती है – मैं झूले झूल रही हूं और मेरा देवर, देख—देख कर हंस रहा है .... मैं

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
--	--	--	--	--	--	सा-	निध़
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मेऽ	लाऽ
ध़सा	सासा	रेग	रेसा	ध़-	-सा	रे-	गरे
नंद	पुर	दाऽ	ऽऽ	मेऽ	ऽले	जाऽ	णाज
सा-	-सा	सा-	निध़	ध़-	सा-	रेग	रेसा
रूऽ	ऽर	मेऽ	लैंऽ	तांऽ	जाऽ	णाऽ	ऽऽ
ध़-	सा-	रेग	गरे	सा-	--	सा-	निध़
सौऽ	गीऽ	चलै	मेरा	दयो	ऽर	मेऽ	लाऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

तभी जाऊंगी जब वह मेरे साथ चलेगा और मुझे जाना ज़रूर है। अन्तिम बन्द में वह समाज की चिन्ता करती दिखती है। कहती है कि देवर–भाभी नन्दपुर के मेले में जाने के लिए घर से निकलते हैं तो चारों ओर से विरोध की आंधी चलती है। वह जाएगी तो ज़रूर लेकिन पहले देवर सरीकों (बिरादरी वालों) को मना ले। ..... गीत में मेलों की पारम्परिक संस्कृति का जिक्र है। मन के भाव व उत्साह का वर्णन है और सामाजिक मान–मर्यादा का बोध है।

53. मेरे खाणे आले़ लोभी दूर

रोटियां पकानी मैं गिणी-गिणी,
ओ जानी गिणी-गिणी वो
मेरे खाणे आले़ लोभी दूर ....

अक्खैं खाणे़ आले़ लोभी खाई जांदे,
सुआद लेई जांदे
लाई जांदे डुगड़े तीर
मेरे खाणे आले़ लोभी दूर ....

अक्खैं कपड़ेयां धोनी मैं छुपी-छुपी,
ओ जानी छुपी-छुपी
मेरे पहनणे आले़ दूर, मेरे लाणे आले़ लोभी दूर

अक्खैं लाणे आले़ लोभी पहनी जांदे
छैल़ सज्जी जांदे
लाई जांदे डुगड़े तीर, मेरे खाणे आले़ लोभी दूर।

भावार्थ :— इस गीत में गृहस्थ कार्यों में लगी पत्नी की उदासी और परदेस गए पति से बिछोह की पीड़ा सरल भाव से शब्दबद्ध हुई है। वह कहती है — मैं गिन–गिन कर रोटियां पका रही हूं। (गिनने के उपक्रम में परिवार के सदस्यों के साथ–साथ पति का ध्यान भी आता होगा) पर मेरे रांधे खाने को पसंद करने वाले इसके लोभी बहुत दूर हैं। काश वह आ कर खाना खा जाते और इसका स्वाद ले पाते...। परन्तु वह नहीं आते और मेरे हृदय में वियोग

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
–	–	–	–	प़	प़	प़	ध़
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	रो	टि	यां	व
साध़	ध़	प़	प़	ग	–	ग	रे
णा	ऽ	नी	मैं	गि	ऽ	णी	गि
रे	–	सा	रे	ग	–	ग	रे
णी	ऽ	जा	नी	गि	ऽ	णी	गि
रे	रे	रे	सा	ध़	ध़-	रे-	रेरे
णी	वो	मे	रे	ऽ	खाऽ	णेऽ	बाले़
रे	ग	रे	–	सा	–	ध़	–
लो	ऽ	भी	ऽ	दू	ऽ	र	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

रूपी तीर चुभो देते हैं। ..... सब से छुपा कर मैं उनके कपड़े धोती हूं। इन्हें पहनने वाले बहुत दूर है। वह आ जाए और इन्हें पहन कर सज–धज लें तो मुझे संतोष हो .....। परन्तु मेरे परदेसी साजन नहीं आते और उनकी याद के तीर मेरे कलेजे में लगते हैं ....। शृंगार रस के वियोग पक्ष का चित्रण लोक गीतों में हुआ है। रोज़ी–रोटी कमाने के लिए घर छोड़ कर जाना, कांगड़ा जनपद के आर्थिक परिप्रेक्ष्य को भी उकेरता है।

54. कूंजा जाई पईयां बरोट

कूंजा जाई पेईयां बरोट, चिट्टे दंद गुलाबी होंठ,
गल्लां करन पंजाबी लोक इक गल सुणी जायां द्योरा मेरेया बांकेया द्योरा
कूंजा जाई पेईयां नदौण, ठंडे पाणी निरमल नौण
इक घुट पी जायां द्योरा, मेरया बांकेया द्योरा
कूंजा जाई पेईयां कलेसर, भाभो मंगदी नक्के जो बेसर
तुरत घड़ाई जायां द्योरा, मेरेया बांकेया द्योरा
कूंजा जाई पेईयां पपरोले़, भाभा रोंदी डुगड़ें खोलें
इक गल सुणी जायां द्योरा, मेरेया बांकेया द्योरा
कूंजा जाई पेईयां मंडिया, चौल़ रिझदे कालि़या हंडिया
दुध भात्त खाई जायां दयोरा, मेरेया बांकेया द्योरा
कूंजा जाई पेईयां पत्तणे, मेरा मन नी लगदा कत्तणे
चरखे भन्नी देयां द्योरा, मेरेया बांकेया द्योरा
कूंजा जाई पेईयां सुकेत, अक कुच्छड़ दूआ पेट
तीजा खेले बालू रेत, मेरया बांकेया द्योरा

भावार्थ :— कांगड़ा, एक समय में पंजाब का हिस्सा था। वहां के लोक साहित्य तथा रीति रिवाजों का प्रभाव यहां के लोक–मानस पर देखा जा सकता है। बोलियों का प्रचलन यहां भी है। मन की बात व्यक्त करती पंक्ति से पहले की पंक्ति में ध्वनि साम्य बिठाने का प्रयास रहता है। वैसे इन पंक्तियों में परिवेश की झलक रहती है। कूंजा (अर्थात प्रवासी पंछी) उड़ कर बरोट पहुंची है। जहां के लोगों के दांत सफेद तथा उनके होंठो की रंगत गुलाबी होती है। पंजाबी लोग परस्पर बातें करते हैं। मेरे देवर ! तुम भी मेरी बात सुन जाओ। कूंजा नदौन जा बैठी है जहां के नौण (प्राकृतिक पानी के स्रोत पर बना तालाब) का पानी ठण्डा शीतल है। सखा–साथी देवर से दो घूंट पीकर जाने का अनुरोध करती है भाभी। वह कहती है कि पंछी कलेसर जा बैठे हैं। तुम मेरी नाक के लिए बेसर (नथनी) घड़वा दो। कूंजा पपरोला पहुंचती है तो भाभी के दुःख का चित्रण है कि वह नाले–खोले में रोती फिरती है। कूंजा मंडी जा बैठी। चावल, काली हांडी में रांधे जा रहे हैं देवर से

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
--	--	प़-	प़-	प़ध़	-सा	सा-	सा-
ऽऽ	ऽऽ	कूऽ	ऽजां	जाई	ऽपे	ईयां	बऽ
सारे	-ग	ग-	-ग	रे-	रेग	रे-	सा-
रोऽ	ऽट	चिऽ	ऽटे	दंऽ	दगु	लाऽ	बीऽ
सारे	-ग	ग-	गरे	रे-	रेग	रेसा	सा-
होंऽ	ऽठ	गऽ	ल्लां	कर	नपं	जाऽ	बीऽ
सारे	-ग	ग-	गरे	रे-	रेग	रेसा	सा-
लोऽ	ऽक	इक	गल	सुऽ	णीजा	यांऽ	दयो
ध़-	--	ध़सा	सा-	सा-	रे-	गरे	रेसा
राऽ	ऽऽ	मेरे	याऽ	बांऽ	कऽ	याऽ	दयो
सा-	--	--	--	--	--	--	--
राऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

आकर खा जाने की मनुहार है। भाभी कहती है कि कूंजा पत्तण (दरिया का वह स्थान जहां आर–पार जाने के लिए बेड़ियां अर्थात लकड़ी की नौकाएं लगी होती हैं।) जा पहुंची, मेरा मन चरखा कातने में नहीं लगता। तुम आकर चरखा तोड़ दो। अन्तिम पंक्तियों में वह कहती है कि कूंजा सुकेत प्रदेश (मंडी) में जा बैठी हैं। एक बच्चा मेरी गोदी में है दूसरा पेट में और तीसरा रेत से खेल रहा है। मेरे बांके (सुन्दर सलोने) देवर ...। इस तरह की बोलियों में ध्वनि साम्य का आकर्षण बांधता है ...। जैसे गुलाबी होंठ और पंजाबी लोक, नदौन तथा नौण कलेसर और बेसर आदि ...।

55. हरिये नी भरिये सब्ज खजूरे

हरिये नी भरिये सब्ज खजूरे
पतलू जिन्हां दे पीले ओ
कंत्त जिन्हा दे सदा मुसाफर
नारां दे क्या हीले ओ

राज बिना कोई राजा झूरे
वैद बिना कोई रोगी ओ
कन्त बिना कोई नार जे झूरै
तिन्हो फिरन बजोगी ओ

टुटेया-फटेया कपड़ा पुराणा
कोई नी सींदा दर्जी ओ
दिलां दा महूरम कोई नीं मिलदा
जे मिलेया अलगरजी ओ

हत्थां दे कागज उड़ी उड़ी जांदे
कलमां गेइयां गुआची ओ
कोठे चढ़ी के लिखणा बैठी
हौवा झुलदी दक्खणी ओ

भावार्थ :— यह गीत एक पत्नी की विरह—वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति है। जिसमें वह अपने दर्द का साधारणीकरण करने का प्रयास करती है। शुरूआत ही उदासी भरी है। फली—फूली हरी खजूर है परन्तु उसके पत्ते पीले पड़ रहे हैं। ... जिन पत्नियों के पति सदा मुसाफिर बने घूमते हैं, उनके क्या हाल होंगे ? अर्थात वे भी भरे—पूरे घर का हिस्सा होने के बावजूद मायूस रहती हैं। जैसे राज्य के बिना राजा दुःखी होता है। (सत्ता होने से ही कोई सत्ताधारी है)। वैद्य के बगैर रोगी चिन्तित रहता है। उसी तरह पति की अनुपस्थिति में पत्नी व्याकुल रहती है। तीनों वियोगी फिरते हैं। फटा पुराना कपड़ा कोई दरजी नहीं सीता अर्थात उधड़ी सीवनों वाले हृदय को कोई सांत्वना देकर गांठ—तुरप नहीं करता। मन का महरम यानी मनःस्थिति समझने वाला सच्चा साथी नहीं मिलता जो भी जीवन में आता है अपनी

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
ध़	ध़	–	ध़	नी़	सा	नी़	ध़	ध़	–	प़	–	–	–
ह	रि	ऽ	ये	ऽ	ऽ	नी	भ	रि	ऽ	ये	ऽ	ऽ	ऽ
ध़	ध़	–	ध़	नी़	सा	नी़	ध़	ध़	–	प़	–	–	–
स	ब	ऽ	ज	ऽ	ऽ	ख	जू	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ
प़	ग	–	ग	–	–	ग	ग	–	–	रे	सा	–	–
प	त	ऽ	लू	ऽ	ऽ	जि	न्हां	ऽ	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ
रे	–	–	रे	सा	–	रे	ग	–	–	–	–	–	–
पी	ऽ	ऽ	ले	ऽ	ऽ	ऽ	ओ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
ग	–	–	ग	–	–	ग	ग	–	–	ग	रे	सा	–
क	ऽ	ऽ	तं	ऽ	ऽ	जि	हां	ऽ	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ
सा	रे	–	–	–	–	रे^{ग}	सा	–	–	ध़	–	प़	–
स	दा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मु	सा	ऽ	ऽ	फि	ऽ	र	ऽ
प़	ध़	सा	रे^{ग}	–	ग	रेसा	रे	सा	–	सा	–	–	–
ना	रां	ऽ	दे	ऽ	क	याऽ	ही	ले	ऽ	ओ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

जरूरतों को लेकर ही आता है। अन्तिम पंक्तियां बहुत भावुक करती है। पत्नी कह रही है कि हाथों के कागज उड़–उड़ जाते हैं। कलम गुम हो जाती है। मैं सबसे अलग कोठे पर चढ़ कर प्रिय को पत्र लिखने बैठती हूं तो दक्षिण से आती हवा चलती है ... अर्थात वह अपने मन की व्यथा को पति तक पहुंचाने में भी असमर्थ है ...।

56. इस गराएं देया लम्बरा

इस गराएं देया लम्बरा हो, इन्हा छोह्रूआं जो लै समझाई
इन्हा छोहरूआं जो लै समझाई कि बत्ता जांदे सीटी मारदे

पाणिये जो जाणा असां चुकणा घड़ोलू
कियां करी नालू टपणा कि लुकी छुपी सीटी मारदे
इस गराएं ....

धारा जो जाणा असां अणना गड़का
नालुए नी दिन्दे टपणा, कि नाले पारैं सीटी मारदे
इस गराएं ......

माए नी मेरिये कपड़ेयां धोणा जे जाणा
नालुए जो कियां टपणा, कि उआरे पारैं सीटी मारदे
इस गराएं ....

भावार्थ :— शादी—विवाह में, महिला—संगीत या गिद्दे (बारात जाने वाली रात को स्त्री—नृत्य आयोजन) में यह गीत बहुत प्रचलित है। जिसमें सिर पर पगड़ी बांध कर एक स्त्री लम्बरदार बन जाती है। बाकी नाचते हुए शिकायत में गाती हैं कि इस गांव के लम्बरदार, तुम यहां के लड़कों को समझा लो। ये हमें देख कर सीटियां बजाते हैं। घड़ा उठा कर हम पानी लेने को जाती हैं तो पानी नहीं भरने देते। लुक़—छिप कर सीटियां बजाते हैं। हम घास लेने जाती हैं तो नाला पार नहीं करने देते। नाले के पार से सीटियां बजाते हैं। यदि कपड़े धोने जाएं तो भी यही हाल। नाले के इधर—उधर दोनों छोरों

स्वर लिपी :-

X			२			X			३		
ध़-	ध़-	सा	ध़-	प़	-	ध़	सा	सा	रे	ग	ग
इऽ	साऽ	ग	राएं	दे	या	लं	ब	रा	हो	इ	ना
रे-	रेरे	रे	ग	प	गरे	सा	ध़	ध़	ध़	सारे	ग
छोऽ	रूआं	जो	लै	ऽ	सम	झा	ई	कि	ब	ताजा	न्दे
रे	गरे	सा	सा	-	-	-	-	-	-	पप	पप
सी	टीमा	र	दे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	पाणि	येजो
म	पप	ग-	-	रेग	रेसा	रे-	--	ग-	-	रेरे	रेरे
जा	णाअ	सांऽ	ऽ	चुक	णाघ	ड़ोऽ	ऽऽ	लूऽ	ऽ	कियां	करी
ग-	प-	गरे	सा-	--	--	-	-	-	-	-	-
नाऽ	लुऽ	टप	णाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

से सीटियां बजा–बजा कर छेड़ते हैं। ... पर यह शिकायत मनोरंजनार्थ ही है। सचमुच की नाराज़गी नहीं है। इसमें कृष्ण वाली छेड़–छाड़ और गोपियों का उपालम्भ है। जिसमें शिकायत करते हुए भी आनन्द है। अनोखा रस है ...।

57. कुक्कू कियां बोलदा

कियां बोलदा मेरी जान भाबो
कुक्कू कियां बोलदा
मण्डिया सकेतां दे सौहणे-सौहणे राजे
असां भी दिक्खणा जाणा भाबो
कुक्कू कियां बोलदा, कियां बोलदा मेरी जान भाबो
कुक्कू कियां बोलदा
भरियां बन्दूकां भाबो मूंढे पर रखियाँ
मारी लैणी तितरां री जोड़ी भाबो
कुक्कू कियां बोलदा, कियां बोलदा मेरी जान भाबो
कुक्कू कियां बोलदा
उआरे भी नाल़ा भाभी पारे भी नाल़ा
बिच बिच कुकुआं दा डेरा भाभी
कुक्कू कियां बोलदा, कियां बोलदा मेरी जान भाबो
कुक्कू कियां बोलदा
बड्डड़ा बजीर भाबो मने मेरे बसेया
कुस कन्नैं गल्लां असां लाणी भाबो
कुक्कू कियां बोलदा, कियां बोलदा मेरी जान भाबो
कुक्कू कियां बोलदा

भावार्थ :– पारम्परिक व बहुत प्राचीन यह गीत अपने शीर्षक – 'कुक्कू कियां बोलदा' से प्रसिद्ध है। सर्दियां बीतते ही, ग्रीष्म की आहट होने पर कुक्कू चहकने लगता है। यहां इस गीत में प्रेम की पुकार लगाता कुक्कू पिया मिलन के लिए उत्तेजित तथा उद्वेलित करता है। अधिकांश गीत संवाद शैली में है। यह गीत ननद भाभी के बीच में है। परन्तु लगभग एक तरफा संवाद है। मात्र सम्बोधन ही है। भाभी से पूछा जा रहा है कि कुक्कू कैसे बोलता है ? प्रश्न स्पष्ट कर रहा है कि उसके स्वर ने युवती को सम्मोहित कर दिया है अपने माधुर्य से। युवती प्रेमरस में डूबी हुई है। ... मण्डी व सुकेत में सुन्दर–सुन्दर राजा हैं। हम भी देखने जाएंगी। साथ में चलते भाई, भरी हुई बन्दूकें कन्धों पर रख लेंगे। राह में तितरों की जोड़ी मार गिराएंगे। राजा का बजीर मेरे मन में बस गया है। मुझे बहुत भा गया है। यह मन की बात मैं किससे करूं। संकोच दिखाते हुए कह दिया गया है। असल में कुक्कू प्रियतम का ही

स्वर लिपी :–

×			२				0			३			
प़	ग़	–	प़	–	प़	–	ध़	सा	–	रे	–	ग	–
कि	यां	ऽ	बो	ऽ	ल	ऽ	दा	ऽ	ऽ	मे	ऽ	री	ऽ
रे	–	–	ग	रे	सा	नि़	ध़	–	–	ध़	–	सा	–
जा	ऽ	ऽ	न	ऽ	भा	ऽ	वो	ऽ	ऽ	कु	ऽ	क्कू	ऽ
रे	ग	–	रे	–	रे	–	सा	–	–	–	–	–	–
कि	यां	ऽ	वो	ऽ	ल	ऽ	दा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सा	–	–	प़	–	ध़	–	सा	सा	–	रे	ग	–	–
मं	डि	ऽ	यां	ऽ	स	ऽ	के	तां	ऽ	दे	ऽ	ऽ	ऽ
ग	(गग)	–	ग	–	ग	म	ग	रे	सा	(ग)रे	–	–	–
सो	(ह्णे)	ऽ	सो	ऽ	ह्	णे	रा	ऽ	ऽ	जे	ऽ	ऽ	ऽ
म॑	–	–	म॑	–	म॑	–	प	प	–	ग	रे	–	–
अ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	भी	ऽ	दि	ख	ऽ	णा	ऽ	ऽ	ऽ
रे	–	–	ग	रे	सा	नी़	ध़	–	–	ध़	–	सा	–
जा	ऽ	ऽ	णा	ऽ	भा	ऽ	भो	ऽ	ऽ	कु	ऽ	क्कू	ऽ
रे	ग	–	रे	–	रे	–	सा	–	–	–	–	–	–
कि	यां	ऽ	बो	ऽ	ल	ऽ	दा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

प्रतीक है। जिस की प्रेम मनुहार, युवा हृदय को बैचेन–व्याकुल कर रही है। कहती है कि इस तरफ भी नाला है। उस तरफ भी पानी से भरा नाला है। बीच में कुक्कुओं का डेरा (अस्थाई निवास) है। अर्थात प्रेम गली अति संकरी और विकट वाली बात है। मिलन सहज–सरल नहीं है। भव–बाधा, दूर कर के ही संभव है ...। प्रेम में शालीन तथा मर्यादित रहते हुए संकोचपूर्ण लुकाव–छुपाव रखते हुए, हृदय की भावनाओं को प्रकट करता यह गीत बहुत प्रभावी है।

58. रस्सो बस्सो वे लोको असां परदेसी वो हुन्दे

रस्सो बस्सो वे लोको असां परदेसी वो हुन्दे
असा परदेसी ओ हुन्दे रैन्दे नदिया दे कण्डे
स्हाड़ी जांदी बारी दा सुखसान्त लेई लेया जी

अप्पू भूंईयां वो बोहगे तुआंजो कुर्सी वो दिंगे
सजण रेई वो जायो अजकी रात वे हाँ

अप्पू भूंईयां वो सोहंगे तुआंजो मंजा वो दिंगे
सजण रेई वो जायो अजकी रात वे हाँ

अप्पू अद्धी वो खाहूँगे तुआंजो पूरी वो दिंगे
सजण रेई वो जायो अजकी रात वे हाँ

सजण मिलणा वो लग्गे के मिली करी खिंडणा वो लग्गे
सजण रेई वो जायो अजकी रात वे हाँ

रस्सो बस्सो वे लोको असां परदेसी वो हुन्दे
असां परदेसी ओ बन्दे रैहन्दे नदिया दे कण्डे
स्हाड़ी जांदी बारी दा सुखसान्त लेई लेया जी

नावार्थ :– लोक जीवन का पल–पल गीतमयी है। भावनाओं में डूबी :चनात्मकता मिलन व विछोह सब कुछ को सरस बना देती है। इस गीत में बेछुड़ने की घड़ी का चित्रण है। विलग रहा व्यक्ति या नातेदार, जाते हुए ाभी को रसते–बसते रहने की शुभाषीष दे रहा है। यह कहते हुए कि वह ारदेसी है और नदी किनारे बसने वाला है। दूसरी ओर से कहा जा रहा है ।के मत जाओ। हम नीचे बैठ लेंगे आप के लिए कुर्सी रखेंगे। सजण, आज

स्वर लिपी :-

×		0		×		0	
–	–	–	–	–	–	प़	–प़
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र	स्सो
प़	–ध़	सा	रे	रे	–	रेरे	साध़
ब	स्सो	वे	लो	को	ऽ	असां	पर
ध़	सा	रे	रे	सा	–	प़–	प़–
दे	सी	वो	हु	न्दे	ऽ	असां	पर
ध़	सा	सा	रे	रे	–	रेरे	साध़
दे	सी	वो	हु	न्दे	ऽ	रऽ	न्दे
ध़–	सा	रे	रे	सा	–	प़	प़
नदि	या	दे	क	न्डे	ऽ	र	सो

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

की रात रूक जाओ। हम नीचे सो लेंगे। आपके लिए मंजा (बाण की रस्स से बुनी चारपाई) उपलब्ध करवाएंगे। यही नहीं स्वयं आधी खा कर आपक पूरी रोटी देंगे। प्रिय सजण आज रात रह जाओ। सजण अर्थात मित्र व लोग मिलने लगे और मिलजुल कर बिछुड़ने लगे। ... कृपया आज की रा हमारे यहां ही रह जाओ ... इन पंक्तियों को शादी–विवाह आदि के बाद जुद होते हुए अक्सर गाया जाता है। लोक गीतों में पंक्तियों का एक से अधि गीतों में दोहराया जाना अक्सर देखा जा सकता है।

*59. उची-उची रिड़ियां

उची-उची रिड़ियां पत्थरू जे चमके खडडा बिच चमकेया पाणी
मैं तां तिजो पुच्छदी परीत कियां लाणी हो

सब सब फुलणू फुली समाए धारा फुलेया गोभी
भाबी चली प्योकियां तां देर चलां सौगी हो
उची-उची रिड़ियां पत्थरू जे चमके खडडा बिच चमकेया पाणी
मैं तां तिजो पुच्छदी परीत कियां लाणी हो

सब सब फुलणू फुली समाए धारा फुल्लेया गरना
भावो चली प्योकियां तां देर लगा मरना हो
उची-उची रिड़ियां पत्थरू जे चमके खडडा बिच चमकेया पाणी
मैं तां तिजो पुच्छदी परीत कियां लाणी हो

भावार्थ :— इस गीत में समान वय के देवर–भाभी के बीच का सम्मोहन चित्रित हुआ है। वास्तव में यह किशोर सुलभ आकर्षण मात्र होता है। दुविधा से गीत शुरू होता है। ... ऊंची–ऊंची रिड़ियों (पठार) पर पत्थर चमकते हैं और खड्ड (पहाड़ी नाला) में पानी चमकता है। मैं पूछती हूं तुमसे, कि प्रीत कैसे लगाई जाए ? सम्बन्ध की गरिमा रखते हुए युवा देवर को समझाने का प्रयास है ...। फिर उस किशोर के नेह को शब्द–बद्ध किया है कि सब फूल खिल चुके अब धारा (पहाड़ी) पर गोभी का फूल खिल रहा है। भाभी अपने मायके जाने लगती है तो देवर साथ चलता है। अगली पंक्तियों में कहा गया है कि भाभी अपने मां–बाबा के घर जाने लगती है तो देवर जान

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
प़-	प़ग	गग	ग-	रेरे	रेग	गग	ग-
उची	उची	रिड़ि	यांऽ	पथ	रूजे	चम	केऽ
रेरे	रेसा	गरे	रेसा	सा-	सा-	--	--
खडा	विच	चम	केया	पाऽ	णीऽ	ऽऽ	ऽऽ
ध़सा	-सा	गरे	रेसा	साध़	ध़प़	प़-	प़-
मैंऽ	ऽतां	तिऽ	जोऽ	पुऽ	च्छ	दीऽ	पऽ
प-	-म	ग-	रेसा	सा-	रे-	ग-	रेसा
रीऽ	ऽत	किऽ	यांऽ	लाऽ	णीऽ	होऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

दे देने की धमकी देता है ...। कांगड़ा जनपद में देवर–भाभी के मध्य हंसी–ठिठोली तथा आकर्षण का सहज वर्णन मिलता है।

60. बान्सुरिये नी तूँ बजदी प्यारी

बान्सुरिये नी तूँ बजदी प्यारी
चल बिन्दराबण जाई बसिये
बे लोका चल बिन्दरावण जाई बसिये

समुन्दरां दे पाणी मिटठड़े नी बणदे
पौंऐं कितणी खण्ड पाई दसिये
बे लोका पौंए कितणी खण्ड पाई दसिए

सपां दे सपोलू अपणे नी बणदे
चूलि़यां दुध प्याई दसिए
बे लोका चूलि़या दुध प्याइए दसिए

चिड़िया दे बच्चे जी अपणे नी बणदे
जितणी भी चोग चुगाई दसिए
बे लोका जितणी भी चोग चुगाई दसिए

भावार्थ :— इस गीत में जीवन के सत्य सूक्ति रूप में शब्दबद्ध हुए हैं। आध्यात्मिक भाव—बोध से गीत का प्रारम्भ होता है। बांसुरी तू बहुत प्यारी अर्थात मधुर बजती है। तेरी मोहक ध्वनि अत्यन्त आकर्षक है। चल कृष्ण के गांव वृन्दावन में जाकर बसें। मानवीकरण हुआ है। बांसुरी को प्रभु के प्रति समर्पित आत्मा के रूप में देखा गया है। जिससे जीवन के व्यर्थ प्रयत्नों को छोड़ कर, प्रभु शरण में जाने का अनुरोध है। यह संसार जैसा है वैसा ही रहेगा। समुन्दर का पानी मीठा नहीं होता। भले कितनी भी शक्कर मिलाते

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
प़	–	ध़	सा	–	ग	–	रे	–	–	–	–	–	–
बां	ऽ	ऽ	सु	ऽ	रि	ऽ	ये	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
–	–	–	ग	–	ग	रे	रे	रे	–	ग	–	–	रे
ऽ	ऽ	ऽ	नी	ऽ	तूं	ऽ	ब	ज	ऽ	दी	ऽ	ऽ	ट
सा	–	–	ध़	–	–	–	प़	ध़	–	सा	–	ग	–
या	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	च	ल	ऽ	बिं	ऽ	द	ऽ
रे	–	–	ग	–	रे	–	रे	ग	–	रे	–	रे	–
रा	ऽ	ऽ	ब	ऽ	ण	ऽ	जा	ई	ऽ	ब	ऽ	सि	ऽ
सा	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
ये	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

रहिए। सांप के बच्चों को अंजुरी भर–भर कर दूध पिला लें। वे अपना ज़हर नहीं छोड़ते। अर्थात बुरा अपनी बुराई या स्वभाव नहीं छोड़ता। चिड़ियों (पंख–पखेरूओं) के बच्चे आप के होकर आप के पास नहीं रहते। चाहे आप कितनी भी चोग उन्हें चुगाते रहे ...। इस दुनिया को अपने अनुरूप करना कठिन है। समाधान यही कि प्रभु शरण में रहा जाए।

61. हाय वो चम्बा

हाय वो चम्बा हरेया भरेया, हरेंया भरेया रांझणा हो
हरियां चम्बे दियां डालि़यां हो

हाय वो गल्लां होले़ करेयां, होले़ मेरे रांझणा हो
सोह्‌रा सुत्ता सस्स जागदी हो
हाय वो चम्बा हरेया भरेया ...

हाय वो गल्लां होले़ करेयां होले़ मेरे रांझणा हो
जेठ सुत्ता जठाणी जागदी हो
हाय वो चम्बा हरेया भरेया ...

हाय वो गल्लां होले़ करेयां, होले़ मेरे रांझणा हो
देर सुत्ता नणद जागदी हो
हाय वो चम्बा हरेया भरेयां ...

भावार्थ :— यह गीत श्रृंगार रस प्रधान है। प्रिया, प्रियतम से संवाद सुख पाना चाहती है। परन्तु परिवार के सदस्यों की चिन्ता है। जिन्हें रात हुए उनका बतियाना शायद अच्छा नहीं लगेगा। पत्नी कहती है कि चम्बा (चम्पा फूल का पहाड़ी नाम) हरियाली से परिपूर्ण है। चम्बा की डालि़यां अर्थात शाखाएं हरी–भरी हैं। पर्यावरण सहज बातचीत का अंग होने का अर्थ यह है कि पेड़ पौधों के प्रति पहाड़ों पर बसे लोगों का रूझान था। पत्नी बड़ी मनुहार से कहती है कि रांझना (पंजाब की लोक गाथा, हीर–रांझा का प्रेमी रांझा, प्रेमी पुरूष का प्रतीक रहा है) अर्थात मेरे प्रिय, बातें धीरे–धीरे करना।

स्वर लिपी :-

x		0		x		0	
प़-	प़-	ग-	ग-	.रेसा	सा-	सा-	सा-
हाय	वोऽ	चंऽ	बाऽ	हरे	याऽ	भरे	याऽ
प़-	प़-	प़-	ध़प़	प़ध़	ध़सा	रे-	ग-
हरे	याऽ	भरे	याऽ	रांऽ	ऽझ	णाऽ	ऽऽ
रे-	--	--	--	ग-	प-	ग-	रे-
होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	हऽ	रिऽ	यांऽ	चंऽ
सा-	ध़-	सा-	रे-	गरे	गरे	रे-	सा-
बेऽ	ऽऽ	दिऽ	यांऽ	डाऽ	ऽलि	यांऽ	ऽऽ
सा-	--	ध़ध़	प़प़	प़ध़	ध़सा	रे-	ग-
होऽ	ऽऽ	मेरे	याऽ	रांऽ	ऽझ	णाऽ	ऽऽ
रे-	--	--	--	ग-	प-	ग-	रे-
होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	हऽ	रिऽ	यांऽ	चंऽ
सा-	ध़-	सा-	रे-	गरे	गरे	रे-	सा-
बेऽ	ऽऽ	दिऽ	यांऽ	डाऽ	ऽलि	यांऽ	ऽऽ
सा-	--	--	--	--	--	--	--
होऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

ससुर सो गए हैं। परन्तु सास जाग रही हैं। इसी तरह वह बताती है कि जेठ (पति के बड़े भाई) तो सो गए हैं परन्तु जेठानी जाग रही है। देवर सोए पर ननद नहीं सोई है ...। एक तरह से उसे आशंका है कि घर के पुरूष सो गए हैं पर स्त्रियों को उन दोनों की बातें सुनने का चाव है। यह भाव भी है कि सास व जेठानी आदि को पहरेदारी करने की आदत होती है ...।

62. कुत्थू ते आया मेरा रूणझुणआ

कुत्थू ते आया मेरा रूणझुणुआ ओ
कुत्थू ते आइयां दो जणियां
काँगड़े ते आया मेरा रूणझुणुआ ओ
शाहपुरे ते आइयां दो जणियां

क्या वो कमांदा मेरा रूणझुणुआ ओ
क्या वो कमांदियां दो जणियां
हल वो चलांदा मेरा रूणझुणुआ ओ
भिकड़ा भनदियां दो जणियां

क्या वो कमांदा मेरा रूणझुणुआ ओ
क्या वो कमांदियां दो जणियां
पाणी ताँ भरदा मेरा रूणझुणुआ ओ
भांडेयां माँजदियां दो जणियां

क्या वो कमांदा मेरा रूणझुणुआ ओ
क्या वो कमांदियां दो जणियां
लकड़ू तां ढोंदा मेरा रूणझुणुआ ओ
रोटियां बणांदियां दो जणियां

भावार्थ :— इस गीत में ग्राम्य परिवेश का चित्रण बहुत नाटकीय ढंग से किया गया है। खेती के कार्यों का चित्रण करने के लिए एक परिकल्पना की गई है। एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि इसमें बहु विवाह अर्थात पुरूष द्वारा एक से अधिक विवाह को एक तरह से उपयोगी बताने का प्रयास है। दो पत्नियों को सामंजस्य पूर्ण ढंग से रहते तथा काम करते हुए चित्रित किया है ... खेत में तीन जन काम कर रहे हैं ...। गीत प्रश्न से आरंभ होकर उत्तरोत्तर प्रश्न व उत्तर के माध्यम से बढ़ता है। रूणझुणआ अर्थात रौनक

स्वर लिपी :-

X		0		X		0	
धसा	-सा	सासा	सारे	रेग	गरे	रेग	ग-
कुथु	ऽते	आया	मेरा	रूण	झुण	आऽ	ओऽ
सासा	-ध	धसा	सा-	ग॒रे-	रेसा	सा-	--
कुथु	ऽते	आई	यांऽ	दोऽ	जणि	यांऽ	ऽऽ
धध	धसा	सासा	सारे	रेग	गरे	रेग	ग-
काँग	ड़ेते	आया	मेरा	रूण	झुण	आऽ	ओऽ
सासा	साध	धसा	सा-	ग॒रे-	रेसा	सा-	--
शाह	पुरे	आई	यांऽ	दोऽ	जणि	यांऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

मिज़ाज का यह वक्ति कहां से आया है तथा इसके साथ दो औरतें कौन हैं ? उत्तर यह कि यह रसीला व्यक्ति कांगड़ा का है तथा औरतें शाहपुर से आई हैं। प्रश्न है कि वे क्या कर रहे हैं तो पुरुष हल चला रहा है और पीछे चलती दोनों स्त्रियां भिकड़ (खुनाई से निकल रहे मिट्टी के ढेले) तोड़ रही हैं। अर्थात खेत को समतल कर रही हैं। पति पानी भर रहा है, दोनों स्त्रियां बर्तन साफ कर रही हैं। फिर रसोई के लिए पुरूष लकड़ियां चुन कर ला रहा है और दोनों मिलकर रोटियां बना रही हैं। अर्थात घर–गृहस्थी सानद चल रही है बल्कि स्त्रियां दो है तो काम सुविधापूर्वक हो रहा है ... पुरुष समाज द्वारा अपेक्षित, स्त्री की मांनसिक गढ़न शब्द–शब्द प्रकट हुई है।

63. मंगवाल़ी दे मैदाना झीला रा पाणी

मंगवाल़ी दे मैदाना झीला दा पाणी
हईवो मेरे दिलड़ुआ हो ...

सैह् रिड़ियाँ रूड़ि गेईयां ज़ित्थु डंगरे चारे
हईवो मेरे दिलड़ुआ हो ...

सैह् पिपल़ डुबी गे जित्थु पींगा पाइयां
हईवो मेरे दिलड़ुआ हो ...

सैह् अंगण डुबी गए जिथु गिट्टियाँ खेलियाँ
हईवो मेरे दिलड़ुआ हो ...

सैह् माणु डूबी गे जिन्हा प्रीता लाईयाँ
हईवो मेरे दिलड़ुआ हो ...

भावार्थ :– अधिकांश लोकगीत, घटना–जन्य होते हैं। जो घटना लोक हृदय को आंन्दोलित करती है। वह एक भाव–गीत में परिणत हो जाती है। बान्ध भी एक कारण रहे हैं। पौंग बांध के कारण आस–पास का कितना ही हिस्सा जलमग्न हो गया। जिससे लोगों की भावनाएं जुडी हुईं थीं। जहां कभी घर थे। हाट–बाज़ार थे या चरागाहें थीं। पानी ही पानी पसर गया। इस गीत में मंगवाली नामक स्थान के डूब जाने का मार्मिक चित्रण है .... मंगवाली (मंगवाल) के मैदान में पौंग झील का पानी भर गया है। हाय मेरे दु:खी दिल, अब वह मैदान नहीं दिखता। वो पठारी हिस्से भी नहीं दिखते

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	ग	ग
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मं	ग
ग	ग	–	ग	–	ग	–	रे	–	–	ग	–	रे	सा
वा	ली	ऽ	दे	ऽ	मै	ऽ	दा	ऽ	ऽ	ना	ऽ	ऽ	ऽ
ग	रे	–	ग	–	प	–	ग	–	–	रे	–	सा	–
झी	ऽ	ऽ	ला	ऽ	रा	ऽ	पा	ऽ	ऽ	णी	ऽ	ऽ	ऽ
सा	–	–	रे	–	ग	रे	स	ध़	प़	प़	–	ध़	–
इ	ई	वो	मे	ऽ	रे	ऽ	दि	ल	ऽ	ड्डु	ऽ	आ	ऽ
सा	–	–	–	–		–	–	–	–	–	–	ग	ग
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मं	ग

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

जहां पशु चराया करते थे। वो पीपल का पेड़ पानी में डूब गया जिसमें झूले डाले थे। वे आंगन भी पानी में आ गए जहां बचपन में गिट्टियां (पत्थर के छोटे–छोटे टुकड़े) खेला करते थे। वो लोग भी अदृश्य हो गए जिनसे प्रीत लगाई थी ....। विकास के क्रम में कुछ कार्य ज़रूरी होते हैं परन्तु वह दर्द भी बहुत गहरे तक असर करता है। जो लोगों को उनके परिवेश से उखाड़ फैंकने की वजह से उपजता है।

64. लच्छी-लच्छी लोक गलांदे

लच्छी-लच्छी लोक गलांदे
हो लच्छी मेरा नाम सजणा
मैं तां भुली पारले मोड़े
तूं लम्बी सीटी लायां सजणा, लच्छी-लच्छी ....

मोड़े पर हार्न बजाया
मैं तेरी बस दिक्खी सजणा, लच्छी-लच्छी ....

सीसे बिच फोटो दिक्खी तेरी
हो नज़र ना लायां सजणा, लच्छी-लच्छी ....

बत्ता बिच टपरू है मेरा
तूँ औंदा जांदा बौयां सजणा, लच्छी-लच्छी ....

तिजों ताईं खाणा वणाया
हां खाणा खाई जायां सजणा, लच्छी-लच्छी ....

छली छली पुच्छे ठाणेदार
हो तेरे डेरे कुण लच्छिये, लच्छी-लच्छी ....

भावार्थ :— श्रृंगार रस प्रधान यह गीत बहुत प्रचलित व लोकप्रिय नृत्य गीत है। जिसमें युवती लच्छी, अपना परिचय देते हुए कहती है कि लोग उसे लच्छी–लच्छी कहते हैं। यही उसका नाम है। कहती है कि तेरे घर के सामान्तर (पारले) मोड़ पर मैं रास्ता भूल गई। तू सीटी बजा कर मुझे दिशा निर्देश देना। ... तूने मोड़ पर हार्न बजाया था। मैंने तेरी बस देखी थी। अर्थात प्रेम दोनों और प्रबल है। बस में बैठे हुउ शीशे में तेरी फोटो देखी।

स्वर लिपी :-

×			0		
सासा-	सासा-	सा--	रेसा-	ध़--	प़--
लच्छीऽ	लच्छीऽ	लोऽऽ	कगऽ	लांऽऽ	न्देऽऽ
सासा-	सासा-	सा--	रेसा-	ध़--	प़--
लच्छीऽ	लच्छीऽ	लोऽऽ	कगऽ	लांऽऽ	न्देहोऽ
गग-	रेरे-	गग-	रेरे-	सा--	---
लच्छीऽ	मेराऽ	नाऽम	सजऽ	णाऽऽ	ऽऽऽ
सासा-	सासा-	सा--	रेसा-	ध़--	प़--
मैंतांऽ	भुलीऽ	पाऽऽ	रलेऽ	मोऽऽ	ड़ेऽऽ
सासा-	सासा-	सा--	रेसा-	ध़--	प़--
मैंतांऽ	भुलीऽ	पाऽऽ	रलेऽ	मोऽऽ	ड़ेतूंऽ
गग-	रेरे-	गग-	रेरे-	सा--	---
लम्बीऽ	सीटीऽ	लायांऽ	सजऽ	णऽऽ	ऽऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

कहीं नज़र न लगवा लेना। परोक्ष ढंग से प्रशंसा की जा रही है। लच्छी बहुत विनम्र अनुरोध करते हुए कहती है। रास्ते (प्रियतम ड्राईवर है) में उसका टपरू (झोंपड़ीनुमा घर) है। आते–जाते हुए कभी बैठना। तेरे लिए खाना बना कर रखा है। खाना खा कर जाना। फिर लोक–समाज की चिन्ता करती दिखती है। बताना चाहती है कि इन दोनों के बीच के सम्बन्ध की चर्चा होने लगी है। बाकी तो कुछ नहीं कहते। परन्तु थानेदार जैसे तैसे जान लेना चाहता है। वह छल–छलकर धोखे से पूछता है कि तेरे डेरे में कौन आता है। इस गीत के बोलों तथा धुन में एक खास मस्ती है।

65. काल़जैं निरदी पीर

कियां तां लुकाणी कियां करी दस्सणी
काल़जे च निरदी पीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर ...

चुप जे रहां तां जिगरा बडोदां
बोलां तां बजी जांदा तीर
नीं ओ माए बोलां तां बजी जांदा तीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर ...

देयो भी मनाए जात्रां सुखियां
मड़िया मैं तोपदी पीर
नीं ओ माए मड़िया मैं तोपदी पीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर ...

दिन अणजाणे बगानियां रातीं
होई गई मैं रांझे दी हीर
नीं ओ माए होई गई मैं रांझे दी हीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर ...

प्रीतां दे हड़ आए रूड़ि रोई खिलकत
कुनी दिक्खे शाह फकीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर

सैले बणां दा मोर ल्यायी दे
बीरां जो देई दे जगीर
नीं ओ माए बीरां जो देई दे जगीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर

चुकदी घड़ोलू रखदी घड़ोलू
पल छिन नदिया दे तीर
नीं ओ माए पल छिन नदिया दे तीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर

इक बक्ख डूबेया दुआ बक्ख डुबेया
होई गई मैं नीरो-नीर
नीं ओ माए होई गई मैं नीरो नीर
नीं ओ माए काल़जे च निरदी पीर

भावार्थ :— यह गीत विरह–वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति है। ऐसे गीत निपट उदासियों से भरे होते हैं। अधिकांशतः ये कथात्मक होते हैं। ... कलेजे को बीन्धती जाती पीर को छुपाया कैसे जाए और बताऊं भी कैसे ? यदि छुपाती हूं तो हृदय बिन्धता है। कह दूं तो तीर चुभता है।" वियोग की पीड़ा से त्रस्त युवती प्रेमिका कहती है कि उसने देव व देवियां भी मनाए और पीर–फकीरों की मड़ी पर भी सज्जदा किया। प्रेम में डूबी प्रिया अपने से अनजान हो गई है। पूरी तरह अपने रांझे की हीर बन गई है। प्रेम की बाढ़

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
सा	सा	–	रे	सा	रे	म	म	म	–	म	–	म	–
कि	यां	ऽ	तां	ऽ	लु	ऽ	का	ऽ	ऽ	णी	ऽ	ऽ	ऽ
म	प	–	प	ध	ध	म	प	–	–	म	–	–	–
कि	यां	ऽ	कं	ऽ	री	ऽ	द	स्	स	णी	ऽ	ऽ	ऽ
सा	रे	सा	नि̲	सा	नी̲	–	सा	–	–	रे	सा	रे	प
का	ल़	ऽ	जे	ऽ	च	ऽ	नि	र	ऽ	दी	ऽ	ऽ	ऽ
म	–	–	–	–	–	–	म	–	–	–	–	–	–
पी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

आई। सारी दुनिया डूब गई। बड़े–बड़े राजा और महाराजा भी नहीं बचे। वह मां से मिन्नत करती हुई कहती है कि मुझे हरे बागों का मोर (प्रेमी की ओर संकेत) ला दो। भले ही अपनी सारी सम्पत्ति भाई को दे दो। उसकी नहीं सुनी जाती, ब्याह दी जाती है। वह दुविधा में है। कभी घड़ा रखती है। कभी उठाती है। पल–छिन नदी के तीर पर पहुंच जाती है। आत्म–घात के बाद की तस्वीर बहुत त्रासद है। फैंटेसी या अति कल्पना का प्रयोग है। वह अपने को मृत्यु बाद देख रही है ... तन का एक हिस्सा डूबा/दूसरा डूबा और मैं पानी में समूची पानी हो गई। ... होई गेई मैं नीरो–नीर; पंक्ति शब्दिक व भावनात्मक दोनों ही दृष्टियों से बहुत उत्कृष्ट है। यह नीरो–नीर होना, मृत्यु ही नहीं प्रेम को समर्पित होकर, प्रेम में डूब जाना भी है ...।

66. कुत्थू भला रैह्ंदियां

कुत्थु भला रैह्ंदियां काल़ियां तितलियां वे
कुत्थु भला रैह्न्दे न बणां दे मोर वे रामा
महलां रैह्न्दिया काल़ियां तितलियां वे
बागे रैह्न्दे जी बागे दे मोर वे रामा

हो क्या कुछ खांदिया काल़िया तितलियां वे
क्या कुछ खांदे न बणा दे मोर वे रामा
दुध भत खान्दियां काल़िया तितलियां वे
गरियां छुआरे जी बणा दे मोर वे रामा

हो अद्धी अद्धी राती जी अज कोई पैहर सवेला वे
कुक्कड़े बांगा अज कोई राम पुकारे ए
हो हत्थ बिच गड़वा जी अज कोई मूण्डे परना वे
गौतम रिशिया जी गंगा कण्डे आयां वे

हो खोल़े कपड़े जी हो अज कोई पैर पन्जेबा वे
गौतम रिशिया जी नदिया दे कंडे आया ए
हो गंगा मेइया जी अज कोई करे स्नानां वे
गंगा मैइया जी अज कोई दे असीसां ए

भावार्थ :— इस गीत में मानवीकरण अलंकार का सुन्दर प्रभावी प्रयोग किया गया है। तितलियों पर महलों के राजाओं की सुपुत्रियों और मोरों पर बागों में रहते युवराजों को रूपायित किया गया है। मोर के रूप में प्रियतम को, बहुत सारे गीतों में देखा गया है। गीत की धुन बहुत मधुर है। नृत्य करती युवतियां, इस गीत पर झूमती हुई देखी जा सकती हैं। प्रश्न व उत्तर से क्रमशः विकसित होता है गीत। वनों की काली तितलियां कहां रहती हैं तथा जंगलों के मोर कहां रहते हैं। काली तितलियों का भोजन क्या है ? वे क्या खाती हैं ? और मोर क्या भोज्य पदार्थ ग्रहण करते हैं। उत्तर है कि वनों

स्वर लिपी :-

×		0		×		0		×		0		×		0	
रेरे	मग	रे-	सा-	ध़-	ध़-	ध़-	सासा	सा-	मग	रेम	ग-	रे-	--	--	--
कुथु	भला	रैंह	दिऽ	यांऽ	ऽऽ	काऽ	लि़यां	तिऽ	तलि	यांऽ	ऽऽ	वेऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
रेरे	मग	रे-	-सा	ध़-	--	प़प़	ध़रे	रे-	-रे	गरे	रेसा	सा-	--	--	--
कुथु	भला	रैहं	न्दे	न-	ऽऽ	वणा	देऽ	मोऽ	ऽर	वेऽ	राऽ	माऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
रेरे	मग	रे-	सा-	ध़-	ध़-	ध़-	सासा	सा-	मग	रेम	ग-	रे-	--	--	--
मैह	लांऽ	रैहं	दिऽ	यांऽ	ऽऽ	काऽ	लि़या	तिऽ	तलि	यांऽ	ऽऽ	वेऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
रेरे	मग	रे-	-सा	ध़-	--	प़प़	ध़रे	रे-	-रे	गरे	रेसा	सा-	--	--	--
बाऽ	गेऽ	रैह	न्दे	जीऽ	ऽऽ	बागे	देऽ	मोऽ	ऽर	वेऽ	राऽ	माऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत क़ी अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

की काली तितलियां महलों में दूध–भात खाती हैं। मोर ज्यादा सम्माननीय हैं। उन्हें मेवे अर्थात गरी (नारीयल) व छुआरे खाने को मिलते हैं। आधी रात को राम–राम कहते हुए गौतम ऋषी कन्धे पर परना (सूती तौलिया) रखे गंगा किनारे आए। उन्होंने गंगा में स्नान किया व गंगा मैया ने उन्हें आशीर्वाद दिया ...। कुछ लोकगीतों में अंश जुड़ते जाते हैं। जिनमें कई बार संगती नहीं दिखती। यह भी ऐसा ही गीत है।

67. होरना पत्तणां

होरना पत्तणां इको इक बेड़ी जी इको इक बेड़ी हो
चम्बे पत्तणे जानी दो बेड़ियां
भला हो मलाइया हो पैह्लड़ैं पूरैं लंघाई दे

अम्मां भी मैं छड्डी दित्ती बापू भी मैं छड्डेया
हो छड्डी दित्ते हो तेरी सौंह छड्डी दित्ते भाई अपणे दूर हो
भला हो मलाइया हो पैह्लड़ैं पूरैं लंघाई दे

घर भी मैं छड्डेया घराट भी मैं छड्डेया
हो छड्डी दित्ते तेरी सौंह छड्डी दित्ते नेड़ तां पड़ेस हो
भला हो मलाइया हो पुज्जणा मैं तेरी सौंह
पुज्जणा मैं सौरेयां जरूर हो

देहरा भी मैं दिक्खेया नदौण भी मैं हंडेया
हो भरी भरी तेरी सौंह भरी भरी टपदे न पूर हो
भला हो मलाइया हो पुज्जणा मैं तेरी सौंह
पुज्जणा मैं सौरेयां जरूर हो

भावार्थ :— देहरा तहसील से थोड़ी दूरी पर चम्बा नामक स्थान पर व्यास (विपाशा) नदी की नौकाओं द्वारा पार करने की सुविधा उपलब्ध है। इसी को चम्बा पत्तण (पत्तण शब्द से अभिप्राय है, जहां नौकाएं बंधी रहती हैं यातायात हेतु) कहा जाता है। युवा दुल्हन इस गीत में मल्लाह से अनुरोध करती हुई कह रही है कि बाकी पत्तणों में एक ही बेड़ी (नौका) रहती है। परन्तु चम्बा पत्तण पर दो बेड़ियां हैं। अतः मुझे पहले पूरे (फेरे) में पार पहुंचा दो। मैंने मां बाबा तथा परिवार को छोड़ दिया। पास–पड़ोस को भी छोड़ आई हूं। मल्लाह ! तुम्हारी सौगन्ध, मुझे ससुराल ज़रूर पहुंचना है। फिर पह कहती है कि उसने देहरा घूम लिया। नदौन भी देख लिया। ... यहां आकर देख रही

स्वर लिपी :-

×			२				०			३			
ध़	ध़	–	सा	–	–	–	रे	रे	–	म	–	–	–
हो	र	ऽ	ना	ऽ	ऽ	ऽ	प	त्त	ऽ	णा	ऽ	ऽ	ऽ
म	म	–	सा	–	सा	–	सा	–	–	म	–	म	–
इ	को	ऽ	इ	ऽ	क	ऽ	बे	ऽ	ऽ	ड़ी	ऽ	जी	ऽ
म	म	–	सा	–	सा	–	सा	रे	–	म	–	–	–
इ	को	ऽ	इ	ऽ	क	ऽ	बे	ऽ	ऽ	ड़ी	ऽ	ऽ	ऽ
प	–	–	–	–	–	–	म	प	–	प	–	म	म
हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	चं	ऽ	ऽ	बे	ऽ	प	त्त
रे	–	–	म	–	प	–	प	–	–	प	–	–	म
णे	ऽ	ऽ	जा	ऽ	नी	ऽ	दो	ऽ	ऽ	बे	ऽ	ऽ	ड़ि
म	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
यां	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

हूं कि बेड़ियां भर–भर कर फेरे लगाए जा रहे हैं। मैं विनती करती हूं, तुम्हें तुम्हारी ही सौगन्ध, मुझे नदी पार पहुंचा दो। आज ही ससुराल पहुंचना चाहती हूं ...। इस गीत में एक ओर पिया घर जाने का अति उत्साह है तो दूसरी ओर नदी पार करने में आती कठिनाई की ओर भी संकेत है ...। यह खेवट, भवसागर पार कराते परमेश्वर भी हो सकते हैं। आत्मा रूपी बहुरिया जिनसे अनुरोध कर रही है।

68. भला साधू जोगिया

भला साधू जोगिया वो मेया काँगड़े दे बन्ने
भल्लेया वो काँगड़े दे बन्ने, धूणा तेरा वो जोगिया

भला साधू जोगिया वो मेया बालक जे निक्का
घरैं बैठी रोये तेरी वो अम्मा
घरैं जो तूँ आया वो जोगिया

भला साधू जाोगिया वो मेया भाबिया दे टोक्यां
भलेया वो भाविया दे टोक्यां
जोग तिहाया वो जोगिया

भला साधू जोगिया वो मेया हट्टी तां घराटे
भलेया वो हट्टी तां घराटे
गलां तेरी वो जोगिया

भला साधू जोगिया वो मेया
घरैं रोये तेरी नार
उजड़िया जिसा दा संसार
घरैं जो वो औयां तूँ जोगिया

भला साधू जोगिया वो मेया
अलख जगाया भलेया हो घरैं मुड़ी फेरा पायां
भला साधू जोगिया मेया किकरी दे डाले
झोली तूंबा तेरा वो जोगिया

भावार्थ :— इस गीत में बाबा बालक नाथ की महिमा का गान है। उनके जीवन वृत्त को शब्द–बद्ध करने की चेष्टा की गई है। साधु जोगिया कांगड़ा के किनारे तेरा निवास है, जहां तू धूणा (प्रज्जवलित हवन कुंड) लगा कर बैठता है। घर में छोटा बालक है। मां तेरी याद में बिसुरती है। तू भाभी के रोकने–टोकने से नाराज हो गया। तूने योगी बनने का निर्णय ले लिया। तू तो अपना गांव–घर छोड़ कर आ गया। परन्तु यहां आज भी हर दुकान पर

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
ध़	सा	-	रे^म	-	सा	-	रे	-	म	प	-	-	-
भ	ला	ऽ	सा	ऽ	धू	ऽ	जो	ऽ	गि	या	ऽ	ऽ	ऽ
-	-	-	-	-	-	-	प^ध	-	-	प	-	ध	-
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	ऽ	मे	ऽ	या	ऽ
प	-	प	प	-	पध	-	म	रे	-	रे	म	प	ध
काँ	ऽ	ग	ड़े	ऽ	देऽ	ऽ	ब	न्ने	ऽ	भ	ले	या	वो
प	-	प	प	-	पध	-	म	रे	-	रे	म	प	ध
काँ	ऽ	ग	ड़े	ऽ	देऽ	ऽ	ब	न्ने	ऽ	धू	ऽ	णा	ऽ
प	प	ध	प	ध	प	म	म	-	-	-	-	-	-
ते	रा	वो	जो	ऽ	गि	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
म^ध	रे	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
या	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

और घराट (आटा पीसने का संयत्र जो नदी–नाले के किनारे, पानी की ऊर्जा से चलाया जाता है) पर तेरी ही चर्चा तथा बातें होती हैं। घर में तेरी पत्नी रोती है जिसका संसार उजड़ गया है। जोगी तूने कीकर की शाख पर अपना झोला तथा तूंबा (लोक–वाद्य) टांग रखा है। इस गीत में बाबा की भक्ति से ज्यादा उनकी मां तथा पत्नी की व्यथा को दर्शाने की चेष्टा है। घर में बच्चे के होने की बात से उन्हें उनका कर्तव्य बोध याद करवाने का प्रयास है। गीत कहना चाहता है कि योग तथा सन्यास भी आपकी लालसा या कामना ही है। इससे कहीं बेहतर है कि आप निष्काम भाव से अपने कर्तव्य निभाएं।

69. सिल्लो बिल्लो सक्किया भैणां

सिल्लो बिल्लो सक्किया भैणां हो

बिल्लो लेई जाणी सौरेयां हो तेरी सौं

हट्टी हट्टी बिकदे छआरे हो

बिल्लो तोपदी है छोरू कुआरे हो

बिल्लो लेई जाणी सौरेयां हो तेरी सौं

हट्टी हट्टी बिकदे बताशे हो

बिल्लो राहें-गोहरैं करदी तमाशे हो

बिल्लो लेई जाणी सौरेयां हो तेरी सौं

हट्टी हट्टी बिकदियां बड़ियां हो

बिल्लो करदी है नौखिया अड़ियां हो

बिल्लो लेई जाणी सौरेयां हो तेरी सौं

ावार्थ :– बोलियों के रूप में गाए जाने वाले गीतों में यद्यपि ज्यादा ध्यान वनि–साम्य पर रहता है। परन्तु इनमें भी गहरे संकेत छिपे रहते हैं – यह ीत, नृत्य गीत है अर्थात् गिद्धे (हल्दी तेल या बारात के जाने की रात का ृत्य) में गाया जाता है। इसमें दो युवा बहनों का जिक्र करते हुए, एक को ससुराल वालों की ओर से ब्याह कर ले जाने की बात है। दुकान–दुकान में छुआरे बिक रहे हैं और बिल्लो कुआरे वर की तलाश में है। यहां यह बताने ा भी प्रयास है कि युवा लड़कियों को ज्यादा वय के पुरूष से बांध दिया ाता था। लड़की वैसा नहीं चाहती ...। दुकान–दुकान में बताशे बिक रहे

स्वर लिपी :-

×			0		
सासा	ग़रे	सासा	निध़	-सा	-रे
सिल्लो	बिल्लो	सक्कि	यांऽ	ऽभै	ऽणा
म-	मग	सा-	ग-	रेसा	नीध़
होऽ	बिल्लो	लेई	जाऽ	णीसौ	रेयां
-ग़	-रे	सा-	--	--	--
होते	ऽरी	सौंऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सासा	ग़रे	सासा	निध़	-सा	-रे
हट्टी	हट्टी	बिक	देछ	ऽआ	ऽरे
म-	गग	सारे	ग-	रेसा	नीध़
होऽ	बिल्लो	तोप	दीऽ	कुआ	रेऽ
-ग़	-रे	सा-	--	--	--
ऽते	ऽरी	सोंऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

हैं। बिल्लो राह–आंगन में तमाशे कर रही है। अठखेलियों का वर्णन है अर्थात पूर्व युवावस्था की मस्ती का चित्रण है। दुकान–दुकान में बड़ियां बेची जा रही हैं और बिल्लो इन दिनों नई–नई ज़िदें कर रही है। अब वह विवाह योग्य हो गई है, उसे ससुराल वाले ले जाएंगे।

70. मेरे देसे दियां

मेरे देसे दियां मेरे देसे दियां
चान्दी रंग सूरता जी मेरे देसे दियां
घणे बणां बिच घणे बणां बिच
सब्ज हरयावलां जी घणे बणां बिच
मेरे खेत्तरां च मेरे खेत्तरां च
फसलां सुनहरियां जी मेरे खेत्तरां च
छैल़ गबरू तां छैल़ गबरू तां
नारां बड़ी बांकियां जी छैल़ गबरू तां
मेरे हिमाचले च मेरे हिमाचले च
मिट्ठी मिट्ठी बोलियां जी मेरे हिमाचले च
देव-देवियां दी देव देवियां दी
औंदिया सवारियां जी देव-देवियां दी
मेरे देसे दियां मेरे देसे दियां
रौणकां अनोखियां जी ...
मेरे देसे दियां मेरे देसे दियां

भावार्थ :— यह गीत, हिमाचल प्रदेश के सुखद व सुहावने पर्यावरण को चित्रित करता है। जिसमें अपने पहाड़ी प्रदेश के प्रति रचयिता का हृदय विभोर व विमोहित है। बर्फ से ढकी पर्वत श्रृंखला के लिए कहा गया है कि मेरे पहाड़ों की सूरत चांदी रंग की है ...। घने वनों में हरियाली है। मेरे खेतों में सुनहरी फसलें लहलहाती हैं। युवक बलिष्ठ व सुन्दर तथा नारियां अत्यन्त बांकी (आकर्षक) हैं। मेरे हिमाचल में मीठी—मीठी बोलियां/उपबोलियां हैं।

स्वर लिपी :-

×			0		
--	--	--	--	--	गरे
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मेरे
सासा	सा-	--	प़प़	प़ग	ग-
देसे	दियां	ऽऽ	मेरे	देसे	दियां
रेग	रेसा	साध़	सासा	रेग	गरे
चांदी	रंग	सूर	तांऽ	जीऽ	मेरे
सासा	सासा	--	--	--	--
देसे	दिया	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

देवताओं व देवियों की सवारियां आती हैं। (यह शिवरात्रि के अवसर पर मण्डी में एकत्रित होते देवों के प्रसंग में है) अन्त में कहा गया है कि मेरे देस (प्रदेश) की रौनक अनोखी है ...। इस गीत की महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें पर्यावरण के अच्छा होने को ही किसी अंचल विशेष के अच्छा व सुखमय होने की कसौटी माना गया है ...। इस गीत के केन्द्र में हिमाचल प्रदेश का प्राकृतिक सौन्दर्य तथा सम्पदा है ...। पर्यावरणीय बोध इस रचना को विशेष बना देता है ...।

71. कजो नैण मलाए

कजो नैण मलाए ओ दिला मेरेया
कजो चैन चुराया ओ जानी मेरिये
पहले चोरी-चोरी नखरे दखाए तैं
फिरी रोई-रोई फफड़े लगाए तैं
कजो भोला-भाला दिल हो मेरा लुटेया
छौंवा मारी करी धुप्पा कजो सुटेया
अप्पूं डोलियां च बैठी चली पेई तूँ
कजो झूठे लारे मिंजो लांदी रेई तू
धोखा देई घर अपणा बसाया
सारी उम्रा दा रोणा पल्लें पाया
इस दिलड़ू नमाणे ने क्या पाया
दिन राती दा भी चैन गुआया
झूठे चकरे च मिंजो मुइए पाया
जीन्दे जी कजो मारी मुकाया

भावार्थ :— इस प्रेम गीत में, झूठी प्रियतमा से शिकायत है। जिसने पहले तो नयन मिलाए अर्थात प्रेम जताया फिर वह अपना अलग घर संसार बसाने के लिए चली गई। ... क्यूं नैन मिलाए ? क्यूं मेरे मन का चैन गंवाया ? पहले तो मुझसे, सबसे छुप कर मिलती रही। नाज़—नखरे दिखाती रही। रो रो कर अपनी वफा का भरोसा जताती रही। मुझ से झूठमूठ का लाड़ करती रही। फिर छोड़ दिया। क्यूं मेरा भोला भाला दिल तूने लूटा। स्वयं तो पालकी में बैठ कर पिया घर चल पड़ी। यदि ऐसा ही करना था तो, मुझे भरोसा क्यूं देती रही। तूने मुझे धोखा देकर अपना घर बसाया है। इस सारे खेल में मेरे बेचारे

स्वर लिपी :-

x		0		x		0	
–	–	प़	प़	प़	ध़	सा	सा
ऽ	ऽ	क	जो	नै	ऽ	ण	म
सा	रेग	ग	ग	सा	ग	रे	रे
ला	एओ	दि	ला	मे	रे	या	ऽ
–	–	रे	रेसा	सा	रे	रे^ग	रेसा
ऽ	ऽ	क	जोऽ	चै	ऽ	न	चुऽ
सा	रेग	ग	ग	रे	सा	–	^गरे
रा	याओ	जा	नी	मे	ऽ	ऽ	रिं
सा	–	प–	प–	म॑	प	–	–
ये	ऽ	पह	लेऽ	चो	री	चो	री
म॑	म॑	म॑ग	ग	म॑	प	–	–
न	ख	रेऽ	दि	खा	ए	तैं	ऽ
–	–	प	म॑	म॑	ग	ग	ग
ऽ	ऽ	फि	री	रो	ई	रो	ई
ग	रे	रे	ग	ग	रे	सा	–
फ	फ	ड़े	ल	गा	ए	ते	ऽ
–	–	–	–	–	–	–	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई व अन्तरा दोनों हैं। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरों पर गाई जाएंगी।

दिल ने क्या हासिल किया ? सारी उम्र के लिए रोना मेरे पल्ले में (हिस्से में) डाल दिया। मेरे मन ने दिन रात अर्थात पल–पल का चैन खो दिया है। अपनी झूठी प्रीत में मुझे क्यूं उलझाया ? तुमने तो मानों मुझे जीते जी मार दिया। प्रेम में धोखा खाया मन, इतना निराश व उदास हो गया है कि खुद पर तथा सारे संसार पर से उसका विश्वास उठ गया है।

72. झुल वो तूं झुल वो सुपारी दिए डालि़ए

ुल वो तूं झुल वो सुपारी दिए डालि़ए
ँ वो मेरा हो तेरी सौंह्
ँ वो मेरा लोभी गल़े लाया हो

मरी वो तू जायां इस खूंऐ पर पाणीए भरींदीए
तैं वो मेरा, हो तेरी सौंह
तैं वो मेरा लोभी गल़े लाया हो

ारी वो तू जायां, इस बागे दी ए मालणे
ए फूलाँ वो चुंगेदिए,
ँ वो मेरा लोभी गल़े लाया हो

मरी वो तू जायां इस बणे बिच डंगरा चरांदिए
तैं वो मेरा हां तेरी सौंह
तैं वो मेरा लोभी भरमाया हो

ावार्थ :— इस गीत में प्रेमी हृदय की ईर्ष्या अपने अतिरके में चित्रित हुई ै। प्रिया को सुपारी की डाली से शिकायत नहीं है। इसे वह झूलते रहने की ाशीष देते कहती है कि तू फलती—फूलती रह। तूने मेरा लोभी (मेरा प्रिय) ले लगाया। अन्य सभी से उसे नाराजगी है। कुंए पर पानी भरती नारी को ह मर जाने का श्राप देती हुई कहती है कि तूने मेरे प्रियतम को गले से ागाया अर्थात उसके प्रति प्रेम जताया है। बाग के फूल चुनती मालिन को ी कहती है कि तूं मर जाए। क्योंकि तूने मेरे प्रियतम को प्यार किया है। से हर एक के प्रति शंका है। वन में पशु चराती ग्वालिन पर भी अपने

स्वर लिपी :-

×			२				0			३			
ग़	ग़	-	प़	-	प़	-	ध़	सा	-	सा	-	-	ग
झु	ल	ऽ	वो	ऽ	तां	ऽ	झु	ल	ऽ	वो	ऽ	ऽ	सु
रे	ग	-	रे	-	सा	-	रे	ग	-	रे	-	-	-
पा	री	ऽ	दि	ऽ	ए	ऽ	डा	लि़	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
रे	-	-	रे	-	-	-	सा	रे	-	सा	-	ध़	-
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	तैं	वो	ऽ	मे	ऽ	रा	ऽ
ध़	सा	-	रे	-	ग	-	सा	रे	-	सा	-	-	-
लो	भी	ऽ	ग	ऽ	लें़	ऽ	ला	या	ऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ

प्रस्तुत गीत में स्थाई है। गीत की अन्य पंक्तियां भी इन्हीं स्वरावलियों पर गाई जाएंगी।

प्रियतम को भरमाने का आरोप लगाते हुए उसे अशुभ शब्दों से सम्बोधित करती है ...। यह प्रेम की पराकाष्ठा न होकर अविश्वास की पराकाष्ठा है

विलुप्त होते शब्दों, धुनों तथा अर्थबोध पर विशेष

विलुप्त होते शब्दों तथा अर्थबोध पर चिन्ता की जानी ज़रूरी है। ोक गीत, संस्कार अनुष्ठानों, मेलों–त्योहारों तथा फ़सलों, पेड़–पौधों पर ेन्द्रित होते हैं। जिनका स्वरूप अब बदल रहा है। संस्कार अनुष्ठान रलीकृत व संक्षिप्त किए जा रहे हैं। मेलों–त्योहारों पर आयोजित सांस्कृतिक ायोजन लोक–साहित्य से अलग हो रहे हैं। लोक–रंग इनमें यदि होता भी ै तो तथाकथित आधुनिक अभिरूचि के अनुरूप ...। घर–आंगन से पेड़– ौधे विलग रहे हैं। फ़सलों से सम्बन्धित काम–काज आधुनिक संयत्रों के योग से भिन्न रूप ले रहा है ...। इस बदलते हुए परिवेश में कुछ शब्द गुम ोते जा रहे हैं तो कुछ का अर्थ बोध बदल रहा है। खेती–बाड़ी से जुड़े कुछ ाब्दों की जगह दूसरे शब्द ले रहे हैं (गाने वाले की समझ व रूचि के नुरूप)। ऐसे बहुत उदाहरण हैं – एक गीत है : "धान बड्डे अच्छरिए कूड़ी म्मी हो/मिंजो तां भला कांगड़े दी कुड़ी गम्मी हो।" इसमें पहली पंक्ति में ूड़ी शब्द का अर्थ है, धान की पराली का संगेला करने में प्रयुक्त बांस की म्बी लकड़ी या लाठी। परन्तु इस प्रक्रिया से अनभिज्ञ युवा गायक यहां कुड़ी ा ही प्रयोग करने लगे हैं अर्थात लड़की। जिसकी संगती धान काटने से हीं बैठती और अनावश्यक पुनरावृत्ति से शिल्प सौन्दर्य खंडित होता है...। क गीत है – "हाय वो चम्बा हरेया–भरेया/हरेया–भरेया रांझणा हो। हरियां म्बे दियां डालि़यां हो।" यहां चम्बा से अभिप्राय चंपा फूल से है, चम्बा जसका पहाड़ी संस्करण है। परन्तु कुछ इसे चंबा स्थान से जोड़ कर देखते ैं। ... पहाड़ी भाषा में अधिकतर ल़ का तथा ब का प्रयोग होता है ...। यहां ी हिन्दी व अंग्रेज़ी भाषियों के पदार्पण से (पहाड़ी जिनमें रची–बसी नहीं है। तथा व का प्रयोग होने लगा है। भाषा को उसकी मौलिकता से विछिन्न रते हुए। ... एक गीत की पंक्ति है राजे दिए बेड़िए सौकणी तू मेरिए ... हां कुछ गायकों ने राजे दिए बेटिए भी कहा है। बेड़ी या नौका कैसे सौतन ो सकती है ? एक तो उन्हें मानवीकरण अलंकार का बोध नहीं दूसरा राजा ी बेटी को सौतन कहते हुए, जिस पर मियां जसरोटिया मोहित हो गया है, र्थ बड़ा सरल–सीधा हो जाता है। दूसरी तरफ राजा की बेड़ी अर्थात नौका

को सौतन कहते हुए इसका अर्थ ग्रहण करना कि मियां जसरोटिया इस पर बैठ कर नदी पार जाता है अपनी प्रिया से मिलने ... नौका से उसका लगाव बढ़ गया है। वह निमित्त बनती है मिलन का ... इसलिए सौतन सी हो गई, कठिन है। इसी तरह एक गीत है "बे चुकेया कुम्भ घड़ा गोरिया बे रौइया गाणिए जो गेई बे हां"। इसमें रौइया का तात्पर्य पानी के स्रोत से है जबकि कुछ गायक इसे राहिया कह देते हैं। उनका अभिप्राय राही से हो जाता है। लेकिन पानी के स्रोत से ही पानी भरने की बात यहां कही गई है। व्यंग्यार्थ या लक्ष्यार्थ पकड़ पाने का अवकाश व धैर्य भागती मेधाओं के पास थोड़ा कम है ... और भी कितने ही ऐसे शब्द है जो प्रालेखित नहीं हुए तो आने वाले समय के दिल व जुबान से दूर होते जाएंगे ...। कुछ धुनें भी विस्मृति के गर्त में समा रही हैं। जिन पर आधुनिक गायक व संगीतकारों का ध्यान नहीं जा रहा ...। उदाहरणार्थ चिट्टी–चिट्टी चादर, गीत की धुन के सौ वर्ष से अधिक प्राचीन होने के प्रमाण हैं। आज यह गीत चार पंक्तियों के नए मुखड़े के साथ नई धुन में प्रचलित है। हमने इसकी पुरानी धुन का स्वरांकन भी दिया है। एक गीत इसमें है – संझा पेइयां दिन घर गेया ... अत्यन्त प्राचीन यह धुन जो गांव–देहात की वयोवृद्ध महिलाओं के पास ही बची हुई है। इस गीत की धुन भी स्वरांकित है। बड़ी रूचिकर बात है कि इस गीत की बन्दिश गज़ल रूप में है। बाकायदा काफिए रदीफ के सही प्रयोग सहित। लोक गीतों की इसी प्राचीनता, परम्परा तथा मौलिकता को सहेजने का विनम्र प्रयास है – लोकभाव स्वरांजली–भाग दो।